बाल जीवनी माला
१. डारविन — अशोक बोस
२. आइजक न्यूटन — ओमप्रकाश आर्य
३. शरतचन्द्र — विष्णु प्रभाकर
४. रामानुजन — डा. वजीर हसन आब्दी
५. जगदीशचन्द्र बसु — सुभाष मुखोपाध्याय
६. मिर्जा गालिब — रज़िया सज्जाद ज़हीर
७. निराला — डा. रामविलास शर्मा
८. आर्किमीदिज — गुणाकर मुळे
९. भास्कराचार्य — गुणाकर मुळे
१०. सी. वी रामन — विश्वमित्र शर्मा
११. एडिसन — शंकरलाल पारीक
१२. वाल्तेयर — देवीप्रसाद
१३. प्रफुल्लचन्द्र राय — राजीव सक्सेना
१४. मादाम क्यूरी — गीता बन्दोपाध्याय
१५. गैलीलियो — ओमप्रकाश आर्य
१६. पास्कल — गुणाकर मुळे
१७. आइंस्टाइन — युगजीत नवलपुरी
१८. केपलर — गुणाकर मुळे
१९. राहुल सांकृत्यायन — भदन्त आनन्द कौसल्यायन
२०. बंकिमचन्द्र — विष्णु प्रभाकर
२१. प्रेमचन्द — नागार्जुन
२२. कॉपर्निकस — डॉ. वजीर हसन आब्दी
२३. लुई पाश्चर — शंकरलाल पारीक
२४. मेंडेलीफ — गुणाकर मुळे
प्रत्येक का मूल्य ३ रुपये ५० पैसे
बाल जीवनी माला
मेंडेलीफ
पीपल्स पब्लिशिंग हाउस

बाल जीवनी माला

मेंडेलीफ

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
रानी झांसी रोड, नई दिल्ली

पहला हिन्दी संस्करण १९७०
दूसरा हिन्दी संस्करण १९७९

लेखक गुणाकर मुले
सम्पादक मुंशी

मूल्य : ३ रुपये ५० नये पैसे

जितेन सेन द्वारा न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली में मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा०) लिमिटेड नई दिल्ली की तरफ से प्रकाशित।
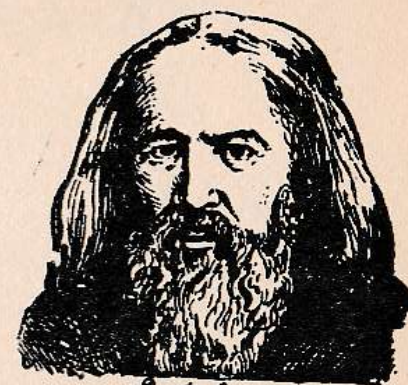
मेंडेलीफ

मेंडेलीफ के हस्ताक्षर

एक दिन की बात

एक दिन की बात है...

जयन्त बड़ा खुश नजर आ रहा था। आठवीं में उत्तीर्ण होने के बाद अब वह नौवें दर्जे में पढ़ने लग गया था। नौवें दर्जे की पढ़ाई शुरू हुए अभी मुश्किल से पांच दिन हुए थे। इस साल उसे कुछ नये विषय पढ़ने थे—भौतिकी, रसायन...। इन नये विषयों की नयी-नयी बातें।

रात को भोजन के बाद जयन्त के दादा ने उससे पूछा : "जयन्त बड़े खुश दिखायी दे रहे हो ! क्या बात है ?"

"दादाजी ! आज स्कूल में मुझे एक नयी बात का पता चला। अब मैं जान गया हूं कि हमारे इस संसार में असल में कितनी वस्तुएं हैं।"

"कितनी वस्तुएं हैं ? अनगिनत वस्तुएं हैं। पर हमारी पुरानी पुस्तकों में लिखा हुआ है कि मूल वस्तुएं केवल पांच ही हैं—मिट्टी, पानी, हवा, आग

और आकाश। इन्हीं मूल पांच वस्तुओं से यानी 'पंच-तत्वों' से संसार की सारी वस्तुएं बनी हैं।"

"नहीं दादा ! मूल वस्तुएं केवल पांच नहीं हैं। इससे अधिक हैं। आज हमारे रसायन के अध्यापक ने बताया कि मूल वस्तुएं, यानी तत्व, ९२ हैं। इन्हीं ९२ तत्वों से संसार की सारी वस्तुएं बनी हैं। आज मैंने अपनी कक्षा की दीवार पर इन तत्वों का एक चार्ट टंगा देखा। उस चार्ट के ऊपर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—**'मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका'**। हमारे अध्यापक ने आज हमें बताया कि इस चार्ट में संसार की अनगिनत वस्तुओं का रहस्य है !"

जयन्त के पिता भी वहां मौजूद थे। वह ध्यान से जयन्त की बातें सुन रहे थे। उन्होंने पूछा : "क्या तुम जानते हो कि उस चार्ट की, मैंडेलीफ की उस आवर्त्त-तालिका की, खोज कैसे हुई ? कब हुई ? मेंडेलीफ कौन थे ? पुराने जमाने के लोग पंचतत्व मैं विश्वास करते थे, पर बाद में ये ९२ तत्व कैसे खोजे गये ?"

"नहीं। हमारे अध्यापक ने उस चार्ट की खोज के बारे में हमें कुछ नहीं बताया। सिर्फ इतना ही बताया कि इस तालिका की खोज मेंडेलीफ नाम के एक महान वैज्ञानिक ने की थी।" जयन्त ने निराशा से उत्तर दिया।

जयन्त के पिता रसायनशास्त्र के प्राध्यापक थे। वह जानते थे कि इस आवर्त्त-तालिका की खोज कैसे हुई। बेटे से बोले :

"मैं तुम्हें बताता हूं कि मेंडेलीफ कौन थे और उन्होंने इस आवर्त्त-तालिका की खोज कैसे की। मैं तुम्हें पुराने जमाने के पंचतत्व के बारे में भी बताऊंगा। मैं तुम्हें यह भी बताऊंगा कि धीरे-धीरे मैंडेलीफ की उस तालिका के तत्वों की खोज कैसे हुई।"

जयन्त तो ध्यान लगाकर सुन ही रहा था। तुम भी सुनो...

[१]

बहुत पहले की बात है। लोग उसके बारे में कहते थे—वह तो कणों को खाता है! वह पागल है! कहता है संसार की सारी वस्तुएं छोटे-छोटे कणों से बनी हैं। कण भी इतने छोटे कि उन्हें हम आंखों से नहीं देख सकते! ऐसे कणों को वह अणु कहता है।

भला ऐसा भी कहीं हो सकता है? इस संसार में नाना प्रकार की वस्तुएं हैं। ठोस वस्तुएं हैं। तरल वस्तुएं हैं। वायु है, अग्नि है। सजीव वस्तुएं हैं। निर्जीव वस्तुएं हैं। क्या ये तमाम चीजें अणुओं से बनी हुई हैं?

नहीं। ऐसा कहनेवाला निश्चय ही पागल है!

कहो उसे, "कणों को खानेवाला!" "कणों को खानेवाला!"...

वह जा रहा है 'कण-आद'! देखो, वह जा रहा है "कणों को खानेवाला"...

कणाद! कणाद!!

कौन था कणाद?

[२]

लगभग दो हजार वर्ष पहले...

हमारे देश में एक बड़े 'मुनि' हुए। उनका असली नाम कोई नहीं जानता। उनका मजाक उड़ाने के लिए उनके समय के लोगों ने उन्हें जो नाम दिया, उसी नाम से बाद में वह प्रसिद्ध हुए!

नाम था कणाद 'मुनि'। कणों को खाने वाले 'मुनि'!

कणाद मुनि ने कुछ सूत्र तैयार किये। ये सूत्र जिस पुस्तक में संग्रहीत हैं वह "वैशेषिक सूत्र" के नाम से प्रसिद्ध हैं। हमारे देश के पुराने ग्रंथों में यह एक बड़े महत्व का ग्रंथ है। इस ग्रंथ में जो बातें बतलायी गयीं हैं, उन्हें हम "वैशेषिक दर्शन" कहते हैं।

कणाद के पहले के पंडितों का मत था कि इस संसार में मूल वस्तुएं केवल चार-पांच ही हैं। इन्हीं चार-पांच वस्तुओं से सारा संसार बना है। ये मूल वस्तुएं या मूलतत्व थे—पृथ्वी, पानी, हवा और आग। कोई-कोई इनके अलावा आकाश को भी मूलतत्व

मानता था। उनका विचार था कि इन्ही पांच तत्वों से संसार बना है।

लेकिन कणाद के विचार भिन्न थे। उनका कहना था कि मूलतत्व छः हैं—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय।

मिट्टी से हम घड़े, ईटें आदि बनाते हैं। ये घिस-कर या टूटकर फिर मिट्टी बन जाते हैं। इस मिट्टीसे हम फिर घड़े आदि बना सकते हैं। हम देखते हैं कि टूटने-जुड़ने पर भी मिट्टी, मिट्टी ही रहती है। इसी एक जैसी रहनेवाली मूल वस्तु को कणाद ने द्रव्य का नाम दिया।

आगे उन्होंने कहा : द्रव्य नौ प्रकार के हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन।

कणाद के पास आजकल जैसी प्रयोगशाला नहीं थी। तब वे कैसे जानते कि पृथ्वी, यानी मिट्टी, अनेक अन्य मूलतत्वों से बनती है। आक्सीजन, नाइट्रोजन आदि अनेक तत्वों से हवा बनती है, यह बात हमैं अभी डेढ़ सौ साल पहले ही मालूम हुई। हाइड्रोजन और आक्सीजन मिलकर जल बनता है, यह बात भी हमें आधुनिक काल में ही मालूम हुई। इसलिए कणाद ने जो द्रव्य गिनाये हैं, वे असल में मूल द्रव्य नहीं थे।

फिर भी, कणाद ने इन तत्वों के बारे मैं एक बड़े मार्के की बात कही। उन्होंने कहा कि ये सारे द्रव्य छोटे-छोटे अतिसूक्ष्म कणों या अणुओं से बने हैं। सभी द्रव्यों की इकाई अणु है। अणु अतिसूक्ष्म तो हैं ही, ये अविभाज्य और अभेद्य भी हैं, अर्थात् इतने छोटे हैं कि आगे फिर इनके और टुकड़े करना संभव नहीं है।

जानते हो द्रव्य के इन सबसे छोटे टुकड़ों को हम क्या कहते हैं ?

आज हम इन्हें एटम यानी अणु या परमाणु के नाम से जानते हैं !

तुम कहोगे : तो इसका मतलब यह हुआ कि अणु के बारे में सबसे पहले कणाद मुनि ने सोचा था। अणु की खोज कणाद ने की थी !

बात कुछ-कुछ सही है। लेकिन यह ध्यान मैं रहे कि कणाद ने केवल अपने दिमाग से अणुओं के बारे मैं सोचा था। उन्होंने प्रयोगशाला में अणु को देखा नहीं था। आज हमने अणुओं के बारे में इतनी अधिक खोज की है कि इन्हें हम "इलेक्ट्रोन-माइक्रोस्कोप" नाम के यंत्र से देख सकते हैं।

लेकिन कणाद ने कहा था कि सारे संसार की वस्तुएं सूक्ष्म अणु या परमाणु से बनी हैं। यह बात बड़ी महत्व की है। उनके समय के दूसरे विद्वानों ने उनकी इस

सही बात का मजाक उड़ाया। उन्हें चिढ़ाने के लिए 'कणाद' नाम दिया। उनके "परमाणुवाद" का मखौल उड़ाया।

कणाद ने अपने दर्शनशास्त्र में द्रव्य की रचना, इसके गुण आदि के बारे में बातें कहीं, लेकिन उन्होंने अपनी पुस्तक में कहीं यह नहीं कहा कि इस संसार या इस संसार की तमाम वस्तुओं का निर्माण किसी ईश्वर ने किया है!

एक सच्चा किस्सा...

फ्रांस के महान वैज्ञानिक लापलेस (१७४६-१८२७ ई.) ने "विश्व-यांत्रिकी" नाम का एक ग्रंथ लिखा है। उस ग्रंथ की एक प्रति उन्होंने नेपोलियन को भेंट की। नेपोलियन ने उस ग्रंथ को देखकर लापलेस से कहा—"आपने विश्व की गति-विधि के बारे में इतना बड़ा ग्रंथ लिखा, लेकिन इसमें तो उस विश्व-निर्माता अर्थात ईश्वर का एक बार भी जिक्र नहीं आया है!"

लापलेस का उत्तर था—"मेरे ग्रंथ के विषय के लिए उस कल्पना की जरूरत नहीं थी।"

कणाद के विचार भी शायद लापलेस जैसे ही थे। लेकिन उस समय के अधिकांश लोग काल्पनिक ईश्वर

में यकीन करते थे। इसलिए उन्होंने कणाद के सही विचारों को भी स्वीकार नहीं किया। उलटे उन्होंने उन्हें चिढ़ाने के लिए नाम दिया—कणों को खानेवाला... कणाद!

लगभग कणाद के ही समय में यूनान में एक विद्वान हुआ। उस विद्वान का भी कहना था कि संसार की सारी वस्तुएं परमाणुओं से बनी हैं। उसने इन परमाणुओं को 'एटम' का नाम दिया था। लेकिन कणाद की तरह उसके परमाणुवाद को भी बाद के विद्वानों ने भुला दिया!

तो क्या उसको भी चिढ़ाने के लिए कोई दूसरा नाम दिया गया था?

नहीं! उसका असली नाम हमें मालूम है। आओ, उसके बारे में भी कुछ रोचक बातें जानें...

देमोक्रितु...

यही उस यूनानी विद्वान का नाम था। कणाद की तरह देमोक्रितु के जीवन के बारे में भी हमें कोई विशेष जानकारी नहीं मिलती। लेकिन इतना जरूर पता चलता है कि वह कणाद से कुछ पहले, ई. पू. पांचवीं शताब्दी में, पैदा हुए थे।

देमोक्रितु के पहले यूनान के कई दार्शनिकों ने विश्व के मूलतत्वों के बारे में अपने-अपने मत जाहिर

किये थे। थेल्स का कहना था कि पानी मूलतत्व है। उसके शिष्य पाइथेगोर की मान्यता थी कि संख्या ही विश्व का मूलतत्व है, क्योंकि संसार की हर वस्तु को संख्या में व्यक्त किया जा सकता है। एक अन्य विद्वान अनाक्सिमेन का कहना था कि वायु संसार का मूलतत्व है।

अलग-अलग मत, अलग-अलग तत्व। प्रकृति की नाना वस्तुओं को ऊपरी निगाह से देखकर ही इन विद्वानों ने अपने-अपने मतानुसार मूलतत्व की कल्पना की थी। लेकिन कोई भी उस ईंट की कल्पना नहीं कर सका जिससे प्रकृति के सारे पदार्थों की रचना हुई है।

अन्त में देमोक्रितु ने कहा कि वह एटम इतना छोटा है कि फिर आगे इसके दो टुकड़े करना बिल्कुल सम्भव नहीं। एटम शब्द का अर्थ ही है : ए अर्थात् नहीं, टूम अर्थात टूटनेवाला। एटम के बारे में देमोक्रितु के विचार लगभग वैसे ही थे जैसे कि कणाद के अणु के बारे में।

लेकिन बाद में यूनान में देमोक्रितु के विचारों का वही हाल हुआ जो कि भारत में कणाद के विचारों का हुआ। बाद के विद्वानों ने इन दोनों के परमाणुवाद की उपेक्षा की !

देमोक्रितु के बाद के यूनानी विद्वानों ने चार मूल-तत्वों—पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि—वाला सिद्धान्त

चलाया। प्लेटो और अरस्तू जैसे प्रसिद्ध दार्शनिकों ने इस चार तत्वों वाले सिद्धान्त का पक्ष लिया। अरस्तू ने तो स्पष्ट रूप से देमोक्रितु के परमाणुवाद का विरोध किया।

अरस्तू बहुत बड़ा दार्शनिक था। वह सिकन्दर का गुरु था। अरस्तू के विरोध के कारण देमोक्रितु के विचार भुला दिये गये। बाद में ईसाई धर्म को अरस्तू की कुछ बातें पसंद आयीं, तो उसने अरस्तू को खूब अधिक उछाला। उसकी गलत बातों को भी सही माना जाने लगा। ईसाई धर्म का कहना था—अरस्तू गलती नहीं कर सकता। अभी दो-तीन सौ साल पहले तक यूरोप के देशों में किसी की आसानी से हिम्मत नहीं होती थी कि वह अरस्तू पर उंगली उठाये !

बीच-बीच में यदि किसी ने सही बात कहने की हिम्मत भी की, तो उसकी कौन सुनता ? एक रोमन विद्वान कवि लुक्रेतियु ने ई. पू. पहली शताब्दी में देमोक्रितु के परमाणुवाद को पुनः जीवित करने की कोशिश की थी। लेकिन ईसाई धर्म के जन्म के बाद यूरोप में लगभग अठारह सौ साल तक फिर किसी की हिम्मत नहीं हुई कि वह एटम या परमाणु की बात उठाता !

एटम और अणु को भुला दिया गया !

कणाद और देमोक्रितु के नाम को केवल चन्द लोग ही जानते थे ।

लेकिन, तुम कहोगे : आज तो एटम या परमाणु शब्द को सभी जानते हैं । गांव के अनपढ़ किसान के मुंह से भी एटम-बम सुनने को मिलता है। आज सभी लोग परमाणु शब्द से परिचित हैं। यह चमत्कार कैसे हुआ ?

हां, मूलतत्वों की खोज की कहानी बड़ी दिलचस्प है । तो आओ, संक्षेप में हम उस कहानी को जानें...

[३]

"जलानेवाली हवा...जलानेवाली हवा...।"

एक वैद्य के दवाखाने में दवाइयां तैयार करने वाला एक तरुण हांफता हुआ कहता है ... "जलानेवाली हवा...ज्वलनशील हवा !"

"शीले, भगवान के लिए, पहले तो बताओ कि बात क्या है ?" वैद्य बाउख़ ने बड़ी आतुरता से पूछा ।

"ज्वलनशील हवा ! एक सच्चा जादू ! आइए मेरे साथ ।"

यह किस्सा है लगभग दो सौ साल पहले का । स्वीडेन देश में एक गरीब घर में पैदा हुआ कार्ल विलहेल्म शीले (१७४२-८६ ई०) उपसाला नगर के एक वैद्य के दवाखाने में दवाइयां बनाने का काम करता था । उसने किसी विद्यालय में पढ़ाई नहीं की थी । लेकिन तत्परता से सीखने में वह इतना तेज था कि दवाइयां तैयार करते-करते वह रसायन के बारे में बहुत-सी बातें सीख गया । काम से छुट्टी मिलने पर वह दवाखाने की प्रयोगशाला के एक कोने में तरह-तरह के प्रयोग करता

रहता । एक सच्चे रसायनज्ञ की तरह उसे यह जानने की धुन सवार थी कि "वस्तुएं कैसे बनी हैं ।"

एक दिन रात को, दवाखाना बन्द होने के बाद और वैद्य के अपने घर चले जाने के बाद, शीले एक नया प्रयोग करने में जुट गया । उसने पानी से भरी हुई एक बोतल में से फास्फोरस का एक टुकड़ा लिया और उसे एक खाली फ्लास्क में डालकर कॉर्क को मजबूती से बन्द कर दिया । इसके बाद उसने फास्फो-रस वाले उस फ्लास्क के नीचे एक मोमबत्ती जलायी । फ्लास्क को लौ लगते ही भीतर का फास्फोरस तेजी से भड़का और घने कुहरे जैसा फैलकर फ्लास्क की भीतरी दीवाल पर सफेद बर्फ-कणों की तरह जम गया ।

शीले जानता था कि जलने के बाद फास्फोरस फास्फोरिक-एसिड में बदल जाता है । उसकी दिलचस्पी यह जानने में थी कि बन्द फ्लास्क में फास्फोरस के जलने के बाद भीतर की उस हवा में क्या रद्दो-बदल होता है !

फ्लास्क ठंडा हुआ, तो उसने उस फ्लास्क को एक पानी भरे बर्तन में उलटा डुबा दिया । एक अजीब चीज देखने को मिली : फ्लास्क में इसके पांचवें हिस्से के बराबर पानी भीतर चढ़ आया ! इसका अर्थ यह हुआ कि शुरू में फ्लास्क के भीतर जो हवा थी उसका

पांचवां हिस्सा फास्फोरस के जलने से गायब हो गया था !

शीले ने फास्फोरस की तरह बन्द फ्लास्क में और भी कई पदार्थ जलाकर देखे । हर बार उसे यही देखने को मिला कि जलने की इस क्रिया में हवा का पांचवां हिस्सा खर्च हो जाता है, गायब हो जाता है !

शीले सोचने लगा—क्या फ्लास्क के भीतर जो हवा बची हुई है वह उस हवा से भिन्न है जो जलने के समय गायब हो गयी है ?

उसने उस बची हुई हवा में जिंदा चूहे को डालकर देखा । थोड़ी देर में ही चूहा मर गया ! अर्थात, वह हवा "जान लेने वाली हवा" है !

"तो वह हवा कैसी है जो फास्फोरस के जलने समय गायब हो गयी है ? क्या उस हवा का शुद्ध नमूना प्राप्त किया जा सकता है ?"—शीले सोचने लगा ।

उसे याद आया कि शोरे (शोरा बारूद बनाने में काम आता है) को पिघलाते समय उस बर्तन के ऊपर कोयले आदि के धूलि-कण चटक उठते हैं । ये कण इतनी जल्दी क्यों भड़कते हैं ? कहीं पिघलते शोरे के बुलबुलों में से वह हवा तो नहीं निकलती जो जलाने में सहायक होती है ?

शीले का अनुमान सही था । उसने शोरे से चमड़े

की एक थैली में वह हवा जमा की। अब वह इस हवा के गुणों को जान सकता था। इसी "ज्वलनशील हवा" की खोज करने के बाद शीले उस वैद्य के पास दौड़ता हुआ आया था, चिल्लाता हुआ—"जलानेवाली हवा... ज्वलनशील हवा..."

वैद्य को वह प्रयोगशाला में ले गया। उसने एक बुझा हुआ-सा कोयला लिया और उसे उस बोतल में डाला जिसमें "ज्वलनशील हवा" थी। कोयला तेजी से भड़क उठा।

दो हजार वर्षों से संसार के सारे विद्वान मानते आये थे कि हवा एक मूलतत्व है। कार्ल विलहेल्म शीले ने पहली बार सिद्ध कर दिखाया कि हवा मूलतत्व नहीं है। हवा दो प्रकार की है: 'ज्वलनशील हवा' और 'निर्जीव हवा'!

लेकिन शीले तो आग की खोज करने निकला था? क्या उसे पता चला कि असल में आग क्या है?

उन दिनों यूरोप के सारे रसायनज्ञों का विश्वास था कि जब कोई चीज जलती है तो उस चीज में से कोई अदृश्य वस्तु आग के साथ बाहर निकलती है और हवा में मिल जाती है। उस अदृश्य चीज को उस जमाने के वैज्ञानिकों ने "फ्लोजिस्टोन" का नाम दिया था।

किन्तु जब तक वैज्ञानिक फ्लोजिस्टोन को काल्पनिक सिद्ध नहीं करते, तब तक आग के बारे में सही जानकारी हासिल करना संभव नहीं था। अन्त में एक वैज्ञानिक ने इस फ्लोजिस्टोन के भूत को भगाकर ही दम लिया। कौन था वह वैज्ञानिक?

उस वैज्ञानिक का नाम था लेवोशिये। लेवोशिये (१७४३-९४ ई.) फ्रांस का निवासी था। लेवोशिये और उसके 'दोस्त' ने अन्त में 'फ्लोजिस्टोन' के भूत को भगा ही दिया। उसका दोस्त कोई आदमी नहीं था। उसका 'दोस्त' था उसका तराजू।

"मैं फ्लोजिस्टोन के बारे में कुछ नहीं जानता। मैंने इसे कहीं नहीं देखा", लेवोशिये का कहना था, "मेरे तराजू ने इसे कहीं नहीं खोजा। मैंने जलनेवाली एक वस्तु ली—जैसे फास्फोरस या शुद्ध धातु का कोई टुकड़ा—और इसे एक बन्द पात्र में जलाया। उस बन्द पात्र में 'ज्वलनशील हवा' के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। जलने पर वह वस्तु बदल जाती है और वह ज्वलनशील हवा गायब हो जाती है। यदि बन्द पात्र के भीतर फास्फोरस रखा हो तो यह फास्फोरस-एसिड (अम्ल) में बदल जाता है और यदि टिन का कोई टुकड़ा हो तो वह जंग लगे टिन में बदल जाता है। मैं इन नयी वस्तुओं को तोलता हूं और देखता हूं कि इनका तोल

पहले के फास्फोरस या टिन से उतनी ही मात्रा में अधिक होता है जितनी कि पात्र के भीतर वह ज्वलनशील हवा थी। इससे साफ जाहिर है कि उस ज्वलनशील हवा के साथ मिलकर ही फास्फोरस, फास्फोरस-एसिड में और टिन जंग वाले टिन में बदलते हैं। इस सारे रद्दोबदल में 'फ्लोजिस्टोन' को बीच में डालना बेवकूफी है।"

लेवोशिये ने यह भी बतलाया कि सभी धातुएं मूलतत्व हैं और उसके जंग या मोरचे ज्वलनशील-हवा के साथ मिलकर बने हुए उनके योगिक (कम्पाउंड) हैं। ज्वलनशील हवा को 'आक्सीजन' नाम लेवोशिये ने ही दिया। इस मूल यूनानी शब्द का अर्थ होता है 'एसिड (अम्ल) बनानेवाला'।

अब यह सिद्ध हो गया था कि हवा मूलतत्व नहीं है, बल्कि दो तत्वों का मिश्रण है। वैज्ञानिकों को आग के रहस्य का भी पता चल गया था।

लेकिन पानी? पुराने जमाने से, हवा की तरह, पानी को भी मूलतत्व माना जाता था। अन्त में कुछ साल बाद इंग्लैंड के एक महान वैज्ञानिक केवेंडिस (१७३१-१८१० ई.) ने यह सिद्ध किया कि हवा की तरह पानी भी मूलतत्व नहीं है, बल्कि दो तत्वों से मिलकर बना है!

कल्पना करो कि उन्हें पहली बार यह जानकर कितना आश्चर्य हुआ होगा कि पानी मूलतत्व नहीं है, बल्कि आक्सीजन और हाइड्रोजन इन दो मूलतत्वों से बना है! हाइड्रोजन, जिसका अर्थ होता है "पानी का निर्माता", लेवोशिये का ही दिया हुआ नाम है।

इस प्रकार अन्त में, हवा की तरह पानी का नाम भी मूलतत्वों की सूची से कट गया!

तो मूलतत्व कितने हैं? कौन-से हैं?

सन् १८०० ई० के आसपास इन सवालों के उत्तर आसान नहीं थे। उस समय वैज्ञानिकों को सारे मूल-तत्वों का ज्ञान होना सम्भव ही नहीं था, क्योंकि धरती पर पायी जानेवाली सारी वस्तुओं पर रसायनिक प्रयोग करके उनमें मूलतत्व खोजना आसान काम नहीं था। जब बिजली की खोज हुई, तभी बहुत-से नये तत्व खोजे जा सके।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में प्रयोगशाला में बिजली के प्रवाह की पहली बार दो इतालवी वैज्ञानिक गाल्वानी और वोल्टा ने खोज की। इन्होंने ही पहली बार विद्युत की सहायता से पानी को दो तत्वों—आक्सीजन और हाइड्रोजन—में अलग-अलग किया।

इसके बाद नये-नये तत्व खोजे जाने लगे। लेवोशिये के समय तक वैज्ञानिक २४ मूलतत्व खोज चुके थे। अगले

चालीस वर्षों के भीतर ही मूलतत्वों की संख्या ५३ तक पहुंच गयी। यह सब करामात थी बिजली की! इस थोड़े से अर्से में सबसे अधिक तत्व खोजे थे इंग्लैंड के प्रख्यात वैज्ञानिक हम्फ्री डेवी (१७७८-१८२९ ई०) ने। पोटाशियम, सोडियम, कैल्शियम, मेग्नेशियम, बेरियम आदि तत्व डेवी ने ही खोजे थे। डेवी की मृत्यु के पंद्रह साल बाद प्रोफेसर क्लाउस ने रुथीनियम नाम का एक नया तत्व खोजा।

अब मूलतत्वों की संख्या ५७ तक पहुंच गयी थी।

लेकिन इसके बाद नये तत्व खोजना आसान नहीं था। बिजली की सहायता से ही इतने अधिक नये तत्व खोजे जा सके थे।

अब आगे?

आगे प्रकाश की किरणों ने नये तत्व खोजने में मदद की। हां, सचमुच प्रकाश की किरणों ने!

तुम शायद जानते हो कि न्यूटन ने खोज की थी कि सूर्य का प्रकाश वास्तव में सात रंगों से बना है। बस, इसी खोज के आधार पर जर्मनी के दो महान वैज्ञानिक रॉबर्ट बुन्सेन (१८११-९९ ई०) और गुस्टाव किरचोफ (१८२४-८७ ई०) ने मिलकर एक यंत्र तैयार किया। यह यंत्र था स्पेक्ट्रोस्कोप यानी वर्णक्रम-दर्शी। यह यन्त्र किसी भी वस्तु के जलने पर उससे

निकलने वाली किरणों को विभिन्न रंगों में स्पष्ट दिखलाता है। बुन्सेन और किरचोफ ने यह भी पता लगाया कि हर वस्तु या हर तत्व का अपना एक खास वर्णपट यानी रंगों का पट होता है। बस, इसी खोज के आधार पर इन वैज्ञानिकों ने बहुत-से नये तत्व खोज निकाले...सीजियम, रूबिडियम इत्यादि।

वर्णक्रमदर्शी यंत्र से उन्होंने यह भी पता लगाया कि जो तत्व पृथ्वी पर पाये जाते हैं उनमें से बहुत-से तत्व सूर्य पर भी हैं!

आज से लगभग सौ साल पहले तक, यानी १८६९ तक, यूरोप के वैज्ञानिक ६३ मूल तत्वों की खोज कर चुके थे। इनमें सारे तत्वों के गुण-धर्म अलग-अलग थे। किसी का रंग नीला था, तो किसी का पीला। कोई गैस था, तो कोई धातु। कोई बहुत हलका था, तो कोई बहुत भारी! अलग-अलग तत्व के अलग-अलग गुण। अजीब झमेला था।

उस समय वैज्ञानिकों ने सारे तत्वों को मुख्यतः दो भागों में बांट रखा था—धातुएं और वे जो धातुएं नहीं हैं।

लेकिन यह काम-चलाऊ विभाजन था। कोई नहीं बता सकता था कि अमुक तत्व ऐसा क्यों है और दूसरे तत्वों के साथ इसका क्या सम्बन्ध है।

अतः, सारे तत्वों को एक पंक्ति में खड़ा करना जरूरी था।

तो क्या सारे तत्वों को एक विशेष क्रम में रखा गया? क्या यह पता चला कि तत्वों की कोई क्रमबद्ध कतार भी है?

हां, पता चला। यह खोज बहुत कठिन थी। इस खोज के लिए सारे तत्वों के गुण-धर्मों को जानना तो जरूरी था ही, और भी बहुत-सी बातें जाननी जरूरी थीं।

किसने की यह खोज?

उस ैज्ञानिक का नाम है मेंडलीफ। रूस के एक महान वैज्ञानिक...

[४]

उराल पर्वत के पूर्व में रूस के साइबेरिया प्रदेश में तोबोल्स्क नाम का एक शहर है। यह शहर तोबोल नदी पर बसा हुआ है। इसीलिए इसका नाम पड़ा: तोबोल्स्क।

सन् १८३४ की ७ फरवरी को इस शहर के स्कूल के मुख्य-अध्यापक के घर एक बालक का जन्म हुआ। बालक का नाम रखा गया: दिमित्री मेंडेलीफ। जिस साल दिमित्री का जन्म हुआ उसी साल उसके परिवार पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। दिमित्री के पिता इवान मेंडेलीफ की आंखों की ज्योति चली गयी, वह अंधे हो गये! उन्हें स्कूल से इस्तीफा देना पड़ा।

मेंडेलीफ परिवार मूलतः तोबोल्स्क का रहनेवाला नहीं था। दिमित्री के जन्म के कोई दो सौ साल पहले यह प्रदेश वीरान जंगल था। लगभग सौ साल पहले रूस के शासक पीटर महान ने साइबेरिया के इस प्रदेश को आजाद करने की नीति अपनायी, तो रूस के पश्चिमी भाग से बहुत-से परिवार यहां आकर बसे थे।

दिमित्री के दादा ने इस प्रदेश का पहला छापाखाना खोला था और १७८७ में उन्होंने तोबोल्स्क से पहली बार "इर्तिश" नाम का एक समाचार-पत्र प्रकाशित करना शुरू किया था।

दिमित्री अपने माता-पिता का सत्रहवां बच्चा था। पिता के अंधे हो जाने पर और उनकी नौकरी छूट जाने पर इस बड़े परिवार का भार आ पड़ा दिमित्री की मां मारिया कोर्निलोफ पर। पिता को जो पेंशन मिलती थी वह सारे परिवार के लिए पर्याप्त नहीं थी।

मां के पिता का परिवार कुछ अधिक सुखी था। मारिया के परिवार ने साइबेरिया में कांच की वस्तुएं बनानेवाली एक फैक्टरी खोली थी। लेकिन उस समय इस फैक्टरी की हालत बड़ी खस्ता थी, यह घाटे का सौदा था। मारिया को यह फैक्टरी उसके भाई से विवाह के समय उपहार के रूप में मिली थी।

अब इसी फैक्टरी को दिमित्री की मां ने सुधारने के बारे में सोचा। यह फैक्टरी तोबोल्स्क से कोई बीस मील दूर आरेमझान्स्कोय नाम के एक देहात में थी। मारिया अपने बाल-बच्चों सहित वहां चली गयी और उसने फैक्टरी का काम अपने हाथ में ले लिया। मारिया की दौड़-धूप और निगरानी से फैक्टरी की हालत

पुनः सुधर गयी। परिवार का खर्च चलने लगा। फैक्टरी में कांच की कई प्रकार की वस्तुएं बनती थीं, खासकर दवाखानों के काम आनेवाले कांच के बर्तन, बोतलें आदि।

नन्हा दिमित्री देखता कि किस प्रकार कांच की वस्तुएं बनती हैं। भट्ठियां लगातार जल रही हैं, कड़ाहियों में कांच पिघल रहा है, कांच की वस्तुएं बनाने वाले कारीगर फुंकनियों की मदद से तरह-तरह की चीजें बना रहे हैं...। दिमित्री यह सब देखता रहता। स्कूल जाने के पहले ही उसने कांच के उद्योग के बारे में बहुत-सी बातें जान लीं।

दिमित्री अब छः साल का हो गया था। मां को उसे स्कूल में भेजने की चिन्ता हुई। लेकिन फैक्टरी वाले देहात में कोई स्कूल नहीं था। इसलिए मां अपने बच्चों सहित फिर तोबोल्स्क लौट आयी। १८४१ में सात साल का दिमित्री तोबोल्स्क के "जिमनाजियम" में भर्ती हो गया।

जानते हो "जिमनाजियम" किसे कहते हैं? इस शब्द का सही अर्थ जान लो तो अच्छा ही होगा। जब-जब भी तुम यूरोप के पुराने प्रख्यात महापुरुषों की जीवनियां पढ़ोगे, तो यह शब्द अक्सर तुम्हारे सामने आयेगा। असल में यह शब्द यूनानी भाषा का है और

दो हजार वर्षों से भी अधिक पुराना है। उस पुराने जमाने मैं यूनानी तरुण जिस मकान या हॉल मैं शारीरिक कसरत आदि करते थे, उसे यूनानी भाषा मैं "जिमनाजियम" कहते थे। यानी जिमनाजियम का पुराना अर्थ था व्यायाम-शाला! लेकिन बाद में मध्य-युग मैं यूरोप के देशों में इस शब्द का अर्थ हो गया : वह स्थान जहां दिमागी कसरत होती है, यानी विद्यालय।

जिमनाजियम में खास ढंग की पढ़ाई होती थी। लैटिन और ग्रीक जैसी पुरानी भाषाओं की पढ़ाई पर अधिक जोर दिया जाता था। गणित, भौतिकशास्त्र, भूगोल जैसे विषय कम महत्व के समझे जाते थे!

लैटिन जैसी मरी हुई भाषा पढ़ने मैं दिमित्री का मन नहीं लगता था। गणित और भौतिकशास्त्र जैसे वैज्ञानिक विषयों में उसकी अधिक रुचि थी। कुछ नटखट विद्यार्थी लैटिन-व्याकरण की पाठ्य-पुस्तक को पेड़ की किसी टहनी से लटका कर उसे अपनी-अपनी गुलेल का निशाना बनाते, तो दिमित्री को बड़ी प्रसन्नता होती!

लेकिन दिमित्री अपना अभ्यास मन लगाकर करता था। अपने एक अध्यापक के साथ वह दूर-दूर तक घूमने जाता और तरह-तरह के रंग-बिरंगे कंकड़-पत्थर, फूल और कीट-पतंगे जमा करता था। स्कूल की

परीक्षाओं मैं वह ऊंचे नम्बरों से पास होता था।

इसी बीच एक दुखद घटना घटी।

कौन-सी घटना ?...

[५]

दिमित्री अभी स्कूल में ही पढ़ रहा था कि १८४७ में उसके पिता की मृत्यु हो गयी।

पिता के देहान्त के कुछ दिन बाद दिमित्री की बड़ी बहन भी चल बसी।

अब तो मारिया के बड़े बच्चे तोबोल्स्क छोड़ कर अन्यत्र चले गये। मारिया और उसके दो बच्चे—दिमित्री और लिजा—ही तोबोल्स्क में रह गये।

दो साल बाद १८४९ में दिमित्री ने स्कूल की पढ़ाई पूरी की।

अब आगे ?

दिमित्री की आगे की पढ़ाई की मां को बड़ी चिंता थी, लेकिन तोबोल्स्क में आगे की पढ़ाई का इन्तजाम नहीं था।

तब क्या किया जाय ?

उस जमाने में मॉस्को शहर अपनी पढ़ाई की व्यवस्था के लिए मशहूर था।

"मास्को जाना कैसा रहेगा ?"—दिमित्री की मां सोचने लगी।

पति की मृत्यु के बाद और बड़े बच्चों के तोबोल्स्क से चले जाने के बाद अब मारिया का मन तोबोल्स्क में नहीं लगता था। उसने अपने हितैषियों से सलाह की। दिमित्री की आगे की पढ़ाई का विचार करके अन्त में मां ने अपने दोनों बच्चों के साथ मास्को चले जाने का निश्चय कर लिया।

तोबोल्स्क से मास्को कितनी दूर है ? तुम सोचते होगे—यही कोई दो-तीन सौ मील दूर। नहीं। तुम यदि सोवियत रूस का कोई नक्शा देखो तो तुम्हें पता चलेगा कि तोबोल्स्क से मास्को बहुत दूर है, हजारों मील दूर...।

दिमित्री की मां अपने दो बच्चों के साथ मास्को की लम्बी यात्रा के लिए रवाना हुई...

उस जमाने में तोबोल्स्क और मास्को के बीच रेल से सम्बन्ध नहीं था। सड़कें भी अच्छी नहीं थीं। उस जमाने में दूर-दूर की यात्राएं घोड़ा-गाड़ी से ही होती थीं। हजारों मील की दूरी तै करने में महीनों लग जाते थे।

दिमित्री की उम्र उस समय १५ साल की थी। इस यात्रा की हर चीज उसके लिए नयी थी। इस

लम्बी यात्रा में उसने घने जंगल देखे, हरे-भरे घास के मैदान देखे, कई छोटी-बड़ी नदियों को पार किया...

अन्त में बड़े उत्साह से वे लोग मास्को पहुंच गये। सारी यात्रा में दिमित्री सोचता आया था कि मास्को पहुंचने पर वह वहां के विश्वविद्यालय का छात्र बनेगा।

लेकिन मास्को पहुंचने पर मां-बेटे के मन्सूबों पर पानी फिर गया! उस समय मास्को विश्वविद्यालय में भर्ती होने के लिए एक नियम यह था कि भर्ती होने वाला छात्र मास्को के आसपास के ही किसी जिमनाजियम का विद्यार्थी होना चाहिए!

दिमित्री और उसकी मां को कितनी निराशा हुई होगी, इसकी तुम भी कल्पना कर सकते हो। बड़ी उम्मीद लेकर मास्को आये थे! लेकिन यहां मिला कोरा जवाब!

अब क्या किया जाय? मां अपने बच्चों को लेकर सेंट पीटरबर्ग पहुंची। वहां अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए एक कालेज था। प्रयत्न करने पर उस कालेज के विज्ञान-विभाग में दिमित्री मेंडेलीफ को प्रवेश मिल गया। यह १८५० की बात है। इस समय दिमित्री की आयु सोलह साल की थी। मां अपने दो बच्चों के साथ अब सेंट पीटरबर्ग में स्थायी रूप से रहने लगी।

दिमित्री की पढ़ाई के विचार से ही वह यहां इतनी दूर आयी थी। बेटा कालेज जाने लगा तो मां को अपार सुख मिला। दिमित्री भी खुश था।

लेकिन यह खुशी थोड़े दिन ही टिक पायी। उसी साल सितम्बर महीने में जाड़ा खाने से मां बीमार पड़ी। यह बीमारी इतनी खतरनाक साबित हुई कि मां चल-बसी।

और...डेढ़ साल बाद दिमित्री की बहन लिजा भी इस संसार से चली गयी।

दिमित्री अकेला रह गया।

[६]

दिमित्री अपनी मां को बहुत प्यार करता था ! मां ने ही तो उसकी पढ़ाई के लिए कितने कष्ट सहे थे । दिमित्री को मां की बहुत याद आती है ।

जीवन के अंतिम दिनों तक दिमित्री के दिमाग में अपनी मां की स्मृति ताजी रही । उसे अपनी मां से मिले सबक बार-बार याद आते । आगे जाकर १८८७ में मेंडेलीफ ने एक पुस्तक लिखी तो उसे अपनी दिवंगत मां को समर्पित किया । इस 'समर्पण' में मेंडेलीफ ने लिखा—"यह पुस्तक मां की स्मृति को उसके सबसे छोटे बेटे की ओर से समर्पित है । उसने स्वतः कष्ट सहकर उसका पालन-पोषण किया...उसने प्यार से उसकी गलतियां सुधारीं, उसमें विज्ञान के अध्ययन के लिए रुचि पैदा की ।... अपने बेटे को उसने अंतिम सबक दिया था—भूलभुलैयों में मत फंसो । केवल शब्दों से नहीं, बल्कि काम से वैज्ञानिक सत्य की खोज में जुटे रहो, क्योंकि अभी बहुत-सी ऐसी चीजें हैं जिन्हे खोजना

बाकी है...। मां की इस शिक्षा को दिमित्री मेंडेलीफ पवित्र सम्पत्ति समझता है ।"

हां, तो सेंट पीटरबर्ग के कालेज का विद्यार्थी दिमित्री अब अकेला था । पर उसने हिम्मत नहीं हारी । अपना सारा ध्यान पढ़ाई में लगा दिया । कालेज में विज्ञान के विषयों की पढ़ाई खूब अच्छी थी । प्राध्यापक योग्य थे, मन लगाकर पढ़ाते थे और अपने विद्यार्थियों को उत्साहित करते थे । इस कालेज के रसायन-शास्त्र के एक प्राध्यापक अलेक्जेंडर वोस्क्रेसेन्स्की का मेंडेलीफ पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा । वोस्क्रेसेन्स्की के विद्यार्थी बड़े सम्मान से उन्हें "रूसी रसायन-शास्त्र का पितामह" कहते थे । मेंडेलीफ ने बाद में चलकर प्राध्यापक वोस्क्रेसेन्स्की की जीवनी लिखी । उसमें मेंडेलीफ ने लिखा :

दूसरे प्राध्यापक वैज्ञानिक कार्य में आनेवाली बाधाओं की चर्चा करते थे, परन्तु जब हम वोस्क्रेसेन्स्की के साथ उनकी प्रयोगशाला में होते तो वे अक्सर कहा करते थे —"भांडे-बर्तन और ईंटों को कोई ईश्वर अपने हाथों से नहीं बनाता ।"

मेंडेलीफ का यह सचमुच ही सौभाग्य था कि उन्हें वोस्क्रेसेन्स्की जैसे योग्य प्राध्यापक मिले थे । वोस्क्रेसेन्स्की के कारण ही मेंडेलीफ रसायन-विज्ञान की ओर अधिक आकर्षित हुए ।

[७]

यह १८५०-५५ का जमाना था। अब वैज्ञानिक चार या पांच तत्वों वाले सिद्धान्त में यकीन नहीं करते थे। मैं तुम्हें बता ही चुका हूं कि किस प्रकार कार्ल शीले और लेवोशिये ने इस पुराने सिद्धान्त को गलत साबित किया था। विद्युत के प्रवाह की खोज हुई। इंग्लैंड के हम्फ्री डेवी ने बहुत से नये तत्व खोज निकाले। १८५० तक पचास से अधिक मूलतत्व खोजे जा चुके थे। ये तत्व किसने और किस प्रकार खोजे, इसके बारे में तुम पहले पढ़ ही चुके हो।

रसायन-शास्त्र अब तेजी से उन्नति कर रहा था। रसायनवेत्ता अब वस्तुओं की बाहरी रचना की ही नहीं, उनकी भीतरी रचना की भी खोज करने लगे। वैज्ञानिक अब वस्तुओं की आणविक रचना के बारे में खोजबीन कर रहे थे, अणु और परमाणुओं के बारे में नये-नये सद्धान्त स्थापित कर रहे थे।

अणु और परमाणु...

एटम या परमाणु शब्द को पुनः सुनकर तुम शायद

कुछ सोच में पड़ गये हो। तुम्हें स्मरण होगा कि भारत के कणाद मुनि और यूनान के देमोक्रितु ने परमाणु का सिद्धान्त स्थापित किया था। तुम्हें यह भी याद होगा कि उस पुराने सिद्धान्त को बाद के लोगों ने भुला दिया था।

तो फिर किसने अणुओं की बात फिर से उठायी ?

जिस साल मेंडेलीफ का जन्म हुआ था, उसी साल के मई महीने में इधर इंग्लैंड में एक प्रख्यात वैज्ञानिक को धर-पकड़ कर राजा से भेंट कराने के लिए सजाया जा रहा था !

एक गरीब जुलाहे के घर जन्म लेने वाले इस वैज्ञानिक का नाम था डाल्टन। सारे जीवन साधारण अध्यापक बने रहने पर भी डाल्टन ने एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक खोज की थी। सारा यूरोप उनके नाम को जान गया था और देश-विदेश की वैज्ञानिक संस्थाओं ने उन्हें सम्मानित किया था। अपने देश के ऐसे मशहूर विद्वान को देखने के लिए राजा भी अब थोड़ा उत्सुक हुआ !

लेकिन डाल्टन क्वेकर संप्रदाय के अनुयायी थे। और, क्वेकर लोग उस रंग का लिबास नहीं पहन सकते थे जैसा कि राजा के सामने हाजिर रहने के लिए जरूरी था ! वे तलवार, बंदूक जैसे हथियार भी अपने पास नहीं रखते थे। लेकिन राजा के सामने एक खास

लिबास में तलवार बांध कर हाजिर होना जरूरी था। दरबार का यही नियम था।

तब क्या किया जाय ?

अन्त में एक रास्ता निकाला गया। कुछ दिन पहले डाल्टन को ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने डाक्टर की उपाधि देकर सम्मानित किया था। उस समारोह में डाल्टन ने जो लिबास पहना था, उसी को पहनकर राजा के सामने उपस्थित होना तय हुआ।

लेकिन डाल्टन ने ऐसी कौन-सी बड़ी खोज की थी कि राजा उससे मिलने को उत्सुक थे ? तो सुनो...

वायुमंडल के अध्ययन में डाल्टन की विशेष रुचि थी। डाल्टन ने जगह-जगह जाकर और पहाड़ों पर चढ़-कर हवा के कई नमूने जमा किये थे।

किन्तु यह क्या ? सभी जगहों की हवा एक जैसी ! कहीं की भी हवा ले लो, इसमें सभी गैसों का अनुपात एक जैसा !

डाल्टन सोचने लगा—ऐसा क्यों ?

अन्त में वह इस नतीजे पर पहुंचा कि हवा की गैसें असल में बहुत ही छोटे-छोटे कणों से बनी हैं, छोटे-छोटे एटम या परमाणुओं से बनी हैं। गैसों के ये पर-माणु इतने छोटे हैं कि इनके बीच में दूसरी गैस के परमाणु के आने-जाने के लिए पर्याप्त जगह रहती है।

इसीलिए हवा में सारी गैसों के परमाणु पूरी स्वतंत्रता से विचरण कर सकते हैं।

कणाद और देमोक्रितु के परमाणु को डाल्टन ने फिर से जीवित किया। कणाद और देमोक्रितु की तरह डाल्टन ने भी अभी परमाणु को अपनी आंखों से देखा नहीं था; उसने केवल अपने दिमाग से ही इस परमाणु के बारे में सोचा था। लेकिन डाल्टन ने परमाणु के बारे में कुछ ऐसी नयी बातें कहीं जिनकी कणाद या देमोक्रितु कल्पना भी नहीं कर सकते थे।

डाल्टन ने अपने से ही सवाल पूछा—"क्या सभी तत्वों के परमाणु आकार और तौल में एक समान हैं ?"

"एक ही तत्व के सारे परमाणु एक जैसे हैं, परन्तु भिन्न-भिन्न तत्वों के परमाणु आकार और तौल में भिन्न-भिन्न हैं।" डाल्टन ने स्वयं ही उत्तर खोजा।

यह एक क्रांतिकारी कल्पना थी। इसी कल्पना से डाल्टन अन्त में इस नतीजे पर पहुंचा कि यदि एक ही तत्व के सारे परमाणुओं का तौल एक समान है, तो दो तत्व एक निश्चत अनुपात में एक दूसरे से मिलने चाहिए। डाल्टन ने सबसे हलके तत्व हाइड्रोजन के परमाणु को इकाई के भार का माना और फिर उसने यह जानने की कोशिश की कि हाइड्रोजन के साथ दूसरे तत्व किस अनुपात में मिलते हैं। डाल्टन जानता था

कि पानी में एक हिस्सा हाइड्रोजन का है, तो सात हिस्से आक्सीजन के। इसलिए उसने आक्सीजन के परमाणु का भार ७ माना।

असल में डाल्टन ने यहां गलती की थी। उस समय डाल्टन को यह पता नहीं था कि हाइड्रोजन के दो परमाणु और आक्सीजन का एक परमाणु मिलकर पानी का एक अणु (मॉलेक्यूल) बनता है। आज हम जानते हैं कि आक्सीजन का परमाणु-भार १६ है, अर्थात आक्सीजन का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से १६ गुना भारी है।

डाल्टन के बाद दूसरे वैज्ञानिक, तत्वों के परमाणु-भार की खोज में जुटे। कुछ वैज्ञानिक, तत्वों के इस परमाणु-भार के बारे में अधिक गहरायी से सोच रहे थे। इन्हीं में एक थे दिमित्री मेंडेलीफ...

[८]

मेंडेलीफ ने प्रो. वोस्क्रेसेन्स्की के प्रभाव के फलस्वरूप रसायन-शास्त्र को अपना प्रमुख विषय बना लिया था और उसमें खोज-कार्य करने का निश्चय कर लिया था। अभी वह बीस साल के विद्यार्थी ही थे कि उन्होंने "समाकृतिका" पर एक खोजपूर्ण निबन्ध लिखा।

कुछ रासायनिक तत्वों के मणिभ (क्रिस्टल) समान आकार-प्रकार के होते हैं। ऐसे समाकृतिवाले रासायनिक तत्वों का जब योग होता है, तो मणिभ के आकार को बिना बदले वे एक-दूसरे का स्थान ले लेते हैं। इस क्रिया को रसायन-शास्त्र में 'समाकृतिका' कहते हैं। मेंडेलीफ की यह खोज बड़े महत्व की थी। इसका महत्व इसी से जाहिर होता है कि रूस के खनिज-संस्थान ने इस निबन्ध को प्रकाशित करने का निश्चय कर लिया। मेंडेलीफ ने खूब मेहनत की थी, इतनी अधिक मेहनत की कि उनका स्वास्थ्य गिर गया।

१८५३ में उन्हें कंठ-रक्तस्राव की खतरनाक बीमारी हो गयी। कुछ डाक्टरों ने तो यहां तक कहा

कि मेंडेलीफ के लिए अब कुछ ही दिन बाकी रह गये हैं।

मेंडेलीफ को अस्पताल में रखा गया।

मेंडेलीफ में जीने की अदम्य लालसा थी। मानव-जाति की सेवा करने के लिए वह जीवित रहना चाहते थे। अन्त में उन्होंने अपने रोग पर विजय प्राप्त कर ली।

अस्पताल में थे तब भी ऐसा कोई दिन नहीं गुजरा जब कि उन्होंने अध्ययन न किया हो।

स्वास्थ्य सुधार के लिए उन्हें कियेव-विश्वविद्यालय भेजने के बारे में सोचा गया। किन्तु मेंडेलीफ सेंट पीटर-बर्ग से नहीं हटना चाहते थे। अपने प्रिय प्राध्यापक वोस्क्रेसेन्स्की से वह दूर नहीं जाना चाहते थे।

अन्त में पांच साल की पढ़ाई के उपरान्त १८५५ में मेंडेलीफ परीक्षा में सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए और उपाधि प्राप्त की। उन्हें स्वर्ण-पदक भी मिला। परीक्षा के साथ-साथ एक शोध-निबन्ध लिखना पड़ता था। उन्होंने अपने शोध-निबन्ध के लिए वही "समाकृतिका" विषय चुना। १८६५ में 'खनिज-पत्रिका' में उनका यह शोध-निबन्ध प्रकाशित हुआ।

इसके बाद मेंडेलीफ स्नातकोत्तर उपाधि के लिए तैयारी करना चाहते थे। परन्तु अब उनका स्वास्थ्य

मेंडेलीफ १८५५ में

इतना अधिक गिर गया था कि वह सेंट पीटरबर्ग की जलवायु और वातावरण में सुधर ही नहीं सकता था। डाक्टरों ने सख्त हिदायत दी कि मेंडेलीफ को दक्षिण की ओर चले जाना चाहिए। दक्षिण की ओर का अर्थ है काले-सागर के पास। वहां की हवा स्वास्थ्य लाभ के लिए बढ़िया मानी जाती है।

उसी समय दक्षिण के दो रूसी नगर ओदेस्सा और सिम्फेरोपोल के स्कूलों में अध्यापकों की दो जगहें

खाली हो गयीं । चूंकि मेंडेलीफ स्वर्ण-पदक विजेता थे, इसलिए वह इन दो जगहों में से किसी भी एक को अपनी इच्छानुसार चुनने के लिए स्वतन्त्र थे । मेंडेलीफ ने ओदेस्सा को पसन्द किया । किन्तु उस जमाने के रूसी शिक्षा-मन्त्रालय ने कागज-पत्रों में कुछ ऐसी गड़-बड़ की कि ओदेस्सा के स्कूल में किसी दूसरे की नियुक्ति हो गयी ।

चलो, सिम्फेरोपोल ही सही । इक्कीस साल के मेंडेलीफ अगस्त १८५५ में सिम्फेरोपोल के लिए रवाना हुए । तुम यदि सोवियत रूस का नक्शा देखो तो जान जाओगे कि ओदेस्सा नगर काले-सागर के उत्तरी तट पर बसा है और सिम्फेरोपोल क्रीमिया प्रदेश में ।

लेकिन जब मेंडेलीफ सिम्फेरोपोल पहुंचे तो उन्होंने वहां के स्कूल को बन्द पाया । शहर में मार्शल-लॉ लगा हुआ था और चारों ओर सिपाही ही सिपाही दिखाई देते थे ।

क्यों ?

क्योंकि, उस समय रूस और टर्की के बीच युद्ध छिड़ गया था । इंग्लैंड और फ्रांस टर्की की ओर से लड़ रहे थे । जानते हो, इंग्लैड क्यों इस युद्ध में कूदा था ? इसका मुख्य कारण था हमारा देश ! तब तक इंग्लैंड ने भारत के बहुत-से हिस्से पर अधिकार जमा लिया

था । भारत की धन-सम्पत्ति इंग्लैंड पहुंच रही थी । अंग्रेज किसी भी हालत में भारत को अपने हाथ से नहीं गंवाना चाहते थे । अंग्रेजों को डर था कि यदि टर्की के सुलतान की हार हुई, तो भूमध्यसागर के याता-यात पर रूस का कब्जा हो जायेगा और तब अंग्रेजों को भारत के साथ सम्बन्ध बनाये रखने में कठिनाई होगी । बस, इसी कारण इंग्लैंड ने टर्की का साथ दिया । यह युद्ध काले सागर के क्रीमिया प्रदेश में हुआ इसलिए इसे "क्रीमिया का युद्ध" कहते हैं ।

हां, तो मेंडेलीफ उसी समय सिम्फेरोपोल पहुंचे जब कि इस नगर से कुछ ही मील की दूरी पर सेवा-स्तोपोल शहर में घमासान युद्ध चल रहा था । ऐसी परिस्थिति में मेंडेलीफ ओदेस्सा लौट आये । कुछ दिनों बाद उन्हें वहीं के स्कूल में पढ़ाने का काम मिल गया । धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य भी सुधरने लगा । ओदेस्सा दक्षिण रूस का एक प्रसिद्ध सांस्कृतिक नगर था । वहां विश्वविद्यालय भी था । मेंडेलीफ ने पढ़ाई के काम के साथ-साथ अपना शोध-कार्य भी जारी रखा ।

[९]

मेंडेलीफ ने ओदेस्सा-विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला और पुस्तकालय से पूरा-पूरा लाभ उठाया। उन्होंने अपनी स्नातकोत्तर उपाधि के लिए यहीं पर 'विशिष्ट आयतनों' पर एक प्रबंध तैयार किया। इसी समय उन्होंने गैसों के बारे में भी विशेष अध्ययन किया।

अब मेंडेलीफ ओदेस्सा में और अधिक नहीं रहना चाहते थे। उनके स्वास्थ्य में काफी सुधार हो गया था। १८५६ के मई महीने में वह सेंट पीटरबर्ग लौट आये और विज्ञान की स्नातकोत्तर उपाधि के लिए उन्होंने विशिष्ट-आयतनों पर लिखा अपना प्रबंध प्रस्तुत किया।

मेंडेलीफ के प्रबंध की खूब प्रशंसा हुई। उन्हें उपाधि मिल गयी। इतना ही नहीं, अगले साल की जनवरी में सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय में रीडर के रूप में उनकी नियुक्ति भी हो गयी। मेंडेलीफ विश्वविद्यालय के प्राध्यापक बने!

जानते हो, उस समय मेंडेलीफ की आयु कितनी थी?

केवल २३ साल!

मेंडेलीफ पढ़ाते भी थे और प्रयोगशाला में खोज-कार्य भी करते थे। आज यदि तुम किसी विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला को देखने जाओ तो वहां का ठाट-बाट और यंत्र-सामग्री देखकर दंग रह जाओगे। आज सोवियत रूस में वैज्ञानिकों का खूब सम्मान होता है। उनके खोज-कार्य के लिए बड़ी-बड़ी प्रयोगशालाएं हैं।

किन्तु आज से सौ साल पहले, जब वहां जार का शासन था, तो वैज्ञानिकों की हालत बड़ी खस्ता थी। उन्हें प्रयोगशालाओं के लिए पर्याप्त धन नहीं मिलता था। मेंडेलीफ दो छोटे-से कमरों की प्रयोगशाला में काम करते थे। फर्श पत्थरों का था और आल्मारियां खाली थीं। साफ हवा के भीतर आने के लिए कमरे में झरोखे भी नहीं थे। ताजी हवा में सांस लेने के लिए बीच-बीच में बाहर निकलना पड़ता था। सारे पीटर-बर्ग की दूकानों में कहीं भी परीक्षण-नलिकाएं नहीं मिलती थीं। वैज्ञानिकों को अपने उपकरण स्वयं तैयार करने पड़ते थे। सालाना आर्थिक सहायता मिलती थी—केवल तीस रूबल!

उन दिनों के रूसी रसायनज्ञ व्यंग्य-भावना से

अक्सर कहा करते थे—"प्रयोगशाला जितनी ही बदतर होगी, गवेषणा उतनी ही बेहतर होगी।"

ऐसी परिस्थितियों में भी मेंडेलीफ ने हिम्मत नहीं हारी। उन्होंने परिस्थितियां सुधारने का भरसक प्रयत्न किया और अपना खोज-कार्य जारी रखा। इसके अलावा जनसाधारण में विज्ञान का प्रचार करने के लिए उन्होंने

मेंडेलीफ को प्रोत्साहन देने वाले प्रो. वोस्क्रेसेन्स्की

सरल भाषा में कई लेख भी लिखे। वैज्ञानिक अनुसंधान को केवल चन्द वैज्ञानिकों तक ही सीमित रखना उन्हें

पसन्द नहीं था। विज्ञान और जीवन के अभिन्न सम्बंध में उन्हें गहरा विश्वास था।

अब मैंडेलीफ की कीर्ति फैलने लगी थी। वोस्क्रे-सेन्स्की और झिनिन जैसे चोटी के रूसी वैज्ञानिकों के उत्तराधिकारी के रूप में उनका नाम लिया जाने लगा था। विश्वविद्यालय में उन्हें प्रोफेसर का ऊंचा पद मिले, इसके पहले यह जरूरी था कि वह कोई बड़ी खोज करके दिखायें।

लेकिन रूस में उस समय कोई बढ़िया प्रयोगशाला नहीं थी। इसलिए मेंडेलीफ ने विदेश जाकर खोज-कार्य करने का निश्चय किया। उन दिनों वैज्ञानिक उन्नति में जर्मनी का खूब नाम था। अन्त में मेंडेलीफ को विदेश जाने के लिए सरकारी रूप से अनुमति मिल गयी—दो साल के लिए!

उस समय यूरोप के वैज्ञानिक जगत में जर्मनी के हाइडेलबर्ग-विश्वविद्यालय का खूब नाम था। वहां बुन्सेन और किरचोफ जैसे प्रख्यात वैज्ञानिक थे। आरम्भ में मेंडेलीफ का विचार था कि वह बुन्सेन के साथ काम करेंगे। पर तुम जानते ही हो कि मेंडेलीफ विद्यार्थी नहीं थे, रसायन-शास्त्र सम्बंधी उन्हें उन सभी बातों की जानकारी थी जो उस समय तक खोजी गयीं थीं। उन्हें तो कुछ नया खोजना था। हाइडेलबर्ग में

प्रयोगशाला की यंत्र-सामग्री सुविधा से मिल जाती थी। इसलिए स्वयं को मिली आर्थिक सहायता में से काट-कसर करके उन्होंने पैसा बचाया और हाइडेलबर्ग में अपनी स्वतंत्र प्रयोगशाला कायम की!

मैंडेलीफ दो साल जर्मनी में रहे। इस बीच उन्होंने गैसों के गुण-धर्मों के बारे में अनेक नयी बातें खोजीं और तीन शोध-निबंध लिखे। उनकी इन खोजों का बड़ा महत्व है। आगे चल कर हम मेंडेलीफ की उस महान खोज के बारे में तुम्हें विस्तार के साथ बतायेंगे जिसने उनके नाम को विज्ञान के इतिहास में अमर बना दिया। मेंडेलीफ की इस समय की इन खोजों को आगे की उस महान खोज के लिए आधार ही समझो।

उस महान खोज के बारे में जानने के बाद रसायन-शास्त्र में पहले किये गये शोध आसानी से समझ में आ जाते हैं।

मेंडेलीफ के अलावा उस समय कई और रूसी वैज्ञानिक भी जर्मनी में खोज-कार्य कर रहे थे। हाइडेलबर्ग में रूसी वैज्ञानिकों की एक मंडली ही बन गयी। इनमें बेकेतोव, साविच, बोरोदिन, बोत्किन और विश्नेग्राद्स्की के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उम्र छोटी होने पर भी मेंडेलीफ को इन सबसे अधिक

सम्मान प्राप्त था। कारण यह कि मेंडेलीफ की गणना रूस के चोटी के वैज्ञानिकों में होने लगी थी।

मेंडेलीफ अभी जर्मनी में ही थे कि १८६० में वहाँ के कार्ल्सश्रूह नगर में रसायनज्ञों का पहला अन्त-र्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ। छब्बीस साल की उम्र के मेंडेलीफ ने इस सम्मेलन में भाग लिया।

अपने दो साल के विदेश-प्रवास में मेंडेलीफ ने स्विट्जरलैंड और इटली की भी यात्रा की।

अन्त में फरवरी १८६१ में मेंडेलीफ स्वदेश लौट आये।

[१०]

मेंडेलीफ विदेश से नयी जानकारी लेकर और नये उत्साह के साथ स्वदेश लौटे थे। दो साल के बाद उन्होंने पुन: विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य शुरू किया। इसके अलावा, वह अब सैनिक-स्कूल और इंजीनियरिंग-कालेज में भी रसायन-शास्त्र पढ़ाने लगे। इस बार उनका पढ़ाने का विषय था कार्बनिक-रसायन (ऑर्गेनिक केमिस्ट्री)।

उस समय तक इस विषय पर रूसी भाषा में कोई उत्तम पाठ्य-पुस्तक नहीं थी। मेंडेलीफ ने कार्बनिक-रसायन पर एक ग्रन्थ लिखने का काम हाथ में लिया। रात-दिन परिश्रम किया और केवल दो महीनें के भीतर ग्रंथ पूरा कर डाला! इस ग्रंथ की विद्वानों ने खूब प्रशंसा की। रूस की विज्ञान-अकादमी ने मेंडेलीफ को इस ग्रंथ के लिए अपना देमिदोव-पुरस्कार भी दिया।

मेंडेलीफ ने यह ग्रंथ बिलकुल नये ढंग से लिखा था। कार्लश्रूह में रसायनज्ञों का जो पहला अन्तर्राष्ट्रीय

सम्मेलन हुआ था, उसमें यह निर्णय हुआ था कि रसायन-शास्त्र का अध्ययन अब अणु, परमाणु आदि की सहायता से होना चाहिए। दो या अधिक परमाणु मिलकर अणु बनते हैं। रसायनिक क्रियाएं इन्हीं अणुओं में रद्दोबदल होने से घटित होती हैं। इस प्रक्रिया में एक तत्व के अणु दूसरे तत्वों के अणुओं के साथ एक खास नियम के साथ मिलते हैं। खास नियम से मिलने की इस बात को रसायन-शास्त्र में "संयोजकता" (वैलेंसी) का नाम दिया गया है।

मेंडेलीफ ने अपने ग्रंथ में रसायनिक प्रक्रियाओं को समझाने के लिए परमाणु के इस गुण-धर्म का इस्तेमाल किया। इस ग्रंथ की दूसरी विशेषता यह थी कि इसमें रहस्यमय बातों के लिए कोई स्थान नहीं था। उस समय तक बहुत-से वैज्ञानिकों का मत था कि कार्बनिक (जीवित) द्रव्यों में एक प्रकार की "जीवन-शक्ति" होती है। इस जीवन-शक्ति का सम्बन्ध वे ईश्वर के साथ जोड़ते थे। परन्तु मेंडेलीफ ने अपने ग्रंथ में स्पष्ट लिखा कि, "जीवित वस्तुओं से सम्बंधित कोई भी घटना किसी अदृश्य शक्ति के कारण नहीं है, बल्कि प्रकृति के सर्व-सामान्य नियमों के कारण है।"

१८६५ में मेंडेलीफ ने डाक्टर की उपाधि के लिए एक शोध-प्रबन्ध लिखा। उनका यह प्रबन्ध पानी और अल्कोहल के मिश्रण से सम्बन्धित था।

तुम्हें मेंडेलीफ के प्रिय अध्यापक वोस्क्रेसेन्स्की की जरूर याद होगी। १८६७ में वोस्क्रेसेन्स्की की खार्कोव में बदली हो गयी। सेंट पीटरबर्ग में रसायन-शास्त्र का प्राध्यापक-पद खाली हो गया। यह पद अब किसको दिया जाय ? कौन इस पद के योग्य है ?

सोचने की जरूरत ही नहीं थी। मेंडेलीफ की योग्यता का कोई दूसरा व्यक्ति इस समय रूस में नहीं था। ३३ साल के मेंडेलीफ प्राध्यापक नियुक्त हुए।

मेंडेलीफ के लेक्चरों में कुछ ऐसा अजीब आकर्षण था कि उनसे रसायन-शास्त्र पढ़ने वाले विद्यार्थी नियमित रूप से हाजिर तो रहते ही थे, दूसरे विभागों के विद्यार्थी भी उनके लेक्चर सुनने के लिए उतावले रहते थे। आजकल किसी प्रसिद्ध सिने-तारिका को देखने के लिए जिस प्रकार लोग टूट पड़ते हैं, उसी प्रकार उस तरुण के लेक्चर सुनने के लिए सेंट-पीटरबर्ग विश्वविद्यालय के विद्यार्थी टूट पड़ते थे। चिकित्सा-विभाग से विद्यार्थी आते। कानून-विभाग से विद्यार्थी आते। इतिहास के विद्यार्थी वहां पहुंचते। दूसरी संस्थाओं से भी विद्यार्थी वहां पहुंचते।

प्राध्यापक के पहुंचने के पहले ही हॉल पूरा भर जाता। कुछ विद्यार्थियों को दरवाजे के पास और खिड़कियों के बाहर खड़ा रहना पड़ता ! उस प्राध्यापक के क्लास में पहुंचने का सभी इंतजार करते रहते !

क्लास के मंच के पीछे एक दरवाजा था। उस दरवाजे के पीछे एक प्रयोगशाला थी। ठीक समय पर वह दरवाजा खुलता और मेंडेलीफ मंच पर हाजिर होते। लम्बे भूरे बाल पीछे कंधों पर गिरे हुए, दाढ़ी के भूरे बालों के कारण चेहरा किसी ऋषि-मुनि जैसा लगता, कमर थोड़ी झुकी हुई—यही रूप था तरुण मेंडलीफ का।

उनके मंच पर पहुंचते ही सारे हॉल में तालियों की गड़गड़ाहट सुनायी देती है। फिर शांति छा जाती है। तरुण प्राध्यापक का भाषण शुरू हो जाता...

मेंडेलीफ ने अब और एक ग्रंथ लिखना शुरू किया था...कौन-सा ग्रंथ ?

"रसायन-शास्त्र के मूलाधार !"

यही ग्रंथ लिखते समय मेंडेलीफ ने एक महान खोज की।

आवर्त्त-तालिका की खोज ! आवर्त्त-नियम की खोज !!

तुम पूछोगे—'आवर्त्त' के क्या माने हैं ?

इस शब्द का अर्थ तो तुम जानोगे ही, तुम्हें यह भी जानना है कि आवर्त्त-नियम क्या है; क्योंकि रसायन-शास्त्र के अध्ययन के लिए इस नियम की जानकारी

बहुत जरूरी है। आवर्त्त नियम रसायन-शास्त्र की आधारशिला है!

तो आओ, हम तुम पता लगायें कि यह नियम कैसे खोजा गया ...

हां, तो मेंडेलीफ एक ग्रंथ लिख रहे थे...

रसायन-शास्त्र के मूलाधार!

विद्यार्थियों को रसायन-शास्त्र पढ़ाने के लिए तैयारी करते समय मेंडेलीफ ने जो टिप्पणियां नोट की थीं, उन्हीं के आधार पर वह यह ग्रंथ तैयार कर रहे थे। ग्रंथ के प्रकाशित होने की विद्यार्थी बड़ी उत्सुकता से राह देख रहे थे। लेकिन स्वयं मेंडेलीफ को संतोष नहीं हो रहा था। उनका लक्ष्य केवल ग्रंथ लिखना नहीं था। वह कुछ दूसरी ही बात सोच रहे थे, बहुत गहरी बात...

तुम्हें हम बता चुके हैं कि उस समय तक—१८६९ तक—यूरोप के वैज्ञानिक ६३ मूलतत्व खोज चुके थे। पर ये ६३ मूलतत्व, सैकड़ों ही नहीं, हजारों वस्तुओं को जन्म देते थे: ऑक्साइड (किसी अन्य तत्व के साथ आक्सीजन के मेल से बनी वस्तुएं), लवण, क्षार...। गैस, तरल, मणिभ, धातुएं...। कुछ वस्तुएं कठोर, तो कुछ बहुत ही मुलायम! कुछ में तेज गंध, तो कुछ में बिल्कुल गंध नहीं! कुछ भारी, तो कुछ हलकी! किसी

का कोई रंग नहीं, तो किसी का रंग आंखों में दर्द पैदा कर दे!

रसायनज्ञ इन हजारों वस्तुओं के बारे में बारीक बातें जानते थे। वे प्रत्येक खनिज का रंग जानते थे, उसके मणिभों की रचना जानते थे, उसका विशिष्ट-गुरुत्व जानते थे, उसके उबलने या पिघलने का तापमान-बिंदु जानते थे। इस प्रकार, संसार की इन नाना वस्तुओं के बारे में रसायनज्ञ सैकड़ों बातों की जानकारी रखते थे। इस जानकारी का कोई अन्त नहीं था।

फिर भी, यह सारी जानकारी एक घने जंगल की तरह थी। इसमें पैर रखने के बाद आगे इसमें न कोई पगडंडी थी, न कोई रास्ता। अजीब गोलमाल था।

तो क्या इस संसार की इन सारी वस्तुओं में कोई नियम नहीं है? कोई तारतम्य नहीं है? क्या संसार की सारी वस्तुएं इसी प्रकार बेमेल हैं?

उस समय के वैज्ञानिक इस सवाल के बारे में गहराई से सोच रहे थे, किन्तु उन्हें इस घने जंगल में कोई रास्ता नजर नहीं आता था। नतीजा यह कि रसायन-शास्त्र का अध्ययन मनमाने ढंग से होने लगा। उस समय अधिकांश वैज्ञानिक सारे मूलतत्वों को दो भागों में विभाजित करते थे—धातु और अधातु। "यदि संसार की वस्तुओं में कोई नियमबद्धता ही नहीं

है, तो हम मूलतत्वों को चाहे जिस क्रम मैं रख सकते हैं", उस समय के रसायनज्ञों का यही मत था।

अधिकांश वैज्ञानिक आक्सीजन से शुरू करते थे, क्योंकि संसार में इस तत्व की मात्रा सबसे अधिक है। कुछ दूसरे रसायनज्ञ हाइड्रोजन से शुरू करते थे, क्योंकि हाइड्रोजन सबसे हलका तत्व है। कुछ वैज्ञानिक लोहे से शुरू करते थे, क्योंकि लोहा सबसे अधिक उपयोगी वस्तु है !

अजीब स्थिति थी। सब कुछ उलझा हुआ !

लेकिन मैंडेलीफ अपने विद्यार्थियों के सामने संसार की सारी वस्तुओं का एक योजनाबद्ध चित्र प्रस्तुत करना चाहते थे। वह अपने ग्रंथ मैं उन प्रमुख नियमों का समावेश करना चाहते थे, जिनके आधार पर संसार की रचना हुई है। क्या संसार की इन नाना वस्तुओं की गहराई मैं ऐसे कुछ नियम हैं ?

यह सही है कि संसार की सारी वस्तुएं इन कुछ मूलतत्वों के योग से बनी हैं। परन्तु सारी दिक्कतें शुरू होती थीं इन्हीं मूलतत्वों से। हर मूलतत्व की अपनी कुछ विशेषताएं थीं, कुछ विशेष गुण-धर्म थे। आरम्भ मैं हर तत्व मनमाने गुणों वाला जान पड़ता था। तो क्या इन तत्वों में कोई एकसूत्रता है ही नहीं ?

दूसरे वैज्ञानिक एकसूत्रता खोजने के झमेले मैं

नहीं पड़ना चाहते थे। किन्तु मैंडेलीफ का शुरू से ही मत था कि इन मूलतत्वों में अवश्य कोई एकसूत्रता है।

"रसायन-शास्त्र के मूलाधार" ग्रंथ लिखते समय मेंडेलीफ तत्वों की इसी एकसूत्रता की खोज कर रहे थे...

मेंडेलीफ तत्वों में उस मूल बात की खोज कर रहे थे जिसके आधार पर सारे तत्वों को एक योजनाबद्ध कतार में खड़ा किया जा सके। लेकिन मूल आधार क्या हो सकता था ?

तत्वों का रंग ?

नहीं। तत्वों के रंग के बारे में एक राय देना सम्भव नहीं। फास्फोरस दो रंग के मिलते हैं—लाल फास्फोरस और पीला फास्फोरस। पीले सोने की पतली पत्री बनायी जाय, तो यह नीला-हरा रंग देती है और अभ्रक की तरह पारदर्शी बन जाती है !

विशिष्ट गुरुत्व ?

तत्वों के इस गुण-धर्म में भी एकसूत्रता नहीं खोजी जा सकती, क्योंकि जैसे ही किसी वस्तु को थोड़ा-सा गर्म किया जाय, इसका विशिष्ट गुरुत्व बदल जाता है।

इसी प्रकार, ताप या विद्युत की संवाहकता या

चुम्बकत्व को तत्वों की एकसूत्रता के लिए मूलाधार नहीं बनाया जा सकता।

तब ?

मेंडेलीफ का पक्का विश्वास था कि, "सभी तत्वों में कोई न कोई सम्बन्ध होना चाहिए, कोई न कोई छिपा हुआ धागा होना चाहिए। ऐसा कोई मूलाधार जरूर होना चाहिए, जो बिना किसी अपवाद के सभी तत्वों को एक सूत्र में बांधता है। यदि हमें यह मूलाधार ज्ञात हो जाता है, तो हम न केवल सारे तत्वों को, बल्कि इन तत्वों से बनी हुई असंख्य वस्तुओं को भी, उसी प्रकार एक योजनाबद्ध कतार में खड़ा कर सकते हैं, जैसे सैनिकों को खड़ा किया जाता है।"

मेंडलीफ ने खूब गहराई से सोचा और अन्त में उन्हें वह मूल आधार मिल ही गया !

यह था, तत्व का **परमाणु-भार**।

चाहे कोई भी तत्व लो, इसका एक निश्चित परमाणु भार होता है, जो प्रयोगों से ज्ञात किया जाता है। तत्व चाहे भारी हो या हलका, गर्म हो या ठंडा, पीला हो या लाल, किसी भी परिस्थिति में तत्व का परमाणु-भार एक जैसा रहता है। परमाणु-भार तत्व की असली पहचान है।

तत्वों की सबसे छोटी इकाई है : परमाणु। सबसे

हलके तत्व हाइड्रोजन के परमाणु का भार १ मान लिया जाता है। फिर यह पता लगाया जाता है कि दूसरे तत्वों के परमाणु हाइड्रोजन के एक परमाणु से कितने गुना भारी हैं। जिस तत्व का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से जितने गुना भारी होगा, वही उस तत्व का परमाणु-भार कहा जाता है। उदाहरण के लिए, आक्सीजन का परमाणु-भार १६ है। इसका यह अर्थ हुआ कि आक्सीजन के परमाणु, हाइड्रोजन के परमाणु से १६ गुना भारी हैं। सोने का परमाणु-भार १९७ है, अर्थात सोने के परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से १९७ गुना भारी हैं।

किसी भी तत्व के परमाणु का आकार उसके परमाणु-भार को निर्धारित करता है। किसी भी एक तत्व के सारे परमाणु एक-से होते हैं। किन्हीं भी दो तत्वों के परमाणुओं में आकार तथा भार का अन्तर होता है।

मेंडेलीफ सोचने लगे—तो क्या परमाणुओं के आकार और भार के इस भेद के आधार पर सारे तत्वों के समान गुणों को और भेदों को समझाया जा सकता है ?

मेंडेलीफ को पक्का विश्वास हो गया कि परमाणु-भार के रूप में उन्हें एक कुंजी मिल गयी है।

उस समय वैज्ञानिकों को ६३ मूल तत्व ज्ञात थे। मेंडेलीफ ने ताश के पत्ते जैसे ६३ कार्ड लिये।

तुम पूछोगे—कार्ड किस लिए ?

इन कार्डों से मेंडेलीफ कोई खेल खेलने नहीं जा रहे थे। वह विज्ञान में एक महान खोज करने जा रहे थे।

तत्वों की तालिका की खोज...

[११]

मेंडेलीफ ने ६३ चौकोर कार्ड लिये। इनमें से प्रत्येक कार्ड पर उन्होंने एक-एक तत्व का नाम, उसके महत्वपूर्ण गुण-धर्म और उसका परमाणु-भार लिखा।

फिर क्या किया ?

मेंडेलीफ इन कार्डों की सहायता से तत्वों में एकसूत्रता खोजने लगे। उन्होंने इन कार्डों को कई तरह से रखकर देखा, सैकड़ों बार इनके स्थान बदले, तत्वों के गुण-धर्मों में समानताएं और भेद खोजने की कोशिश की। मैंडेलीफ सारे तत्वों में एक व्यापक नियम, एक व्यवस्था खोजने लगे...

रात-दिन, पढ़ते समय, प्रयोगशाला में काम करते समय, घर पर या सड़क पर चलते समय—हर घड़ी उनके दिमाग में ये ६३ कार्ड मंडराया करते थे। इन्हें एक कतार में खड़ा करें, तो कैसे ?

एक दिन रात को मैंडेलीफ इन्हीं ६३ कार्डों को मेज पर फैलाये कुछ सोच रहे थे। सोचते रहे। आखिर सोचते-सोचते थक गये—और, सो गये।

किन्तु दिमाग अब भी नहीं सोया। नींद में भी उनका दिमाग काम करता रहा। उनके एक विद्यार्थी ने बताया है कि उस रात मेंडेलीफ ने एक "सपना" देखा था। लेकिन यह तो उनके विद्यार्थी का कथन था। दरअसल, मेंडेलीफ जब आंखें बन्द किये "सो"

मेंडेलीफ : चिन्तन में डूबे

रहे थे तो वह सोये नहीं थे। उनका दिमाग जाग रहा था, काम कर रहा था, सिर्फ मेंडेलीफ की आंखें बन्द थीं। दिमाग काम करता रहा, काम करता रहा। और, उस "सपने" में उन्होंने देखा कि सारे तत्व एक तालिका में सज गये हैं!

दूसरे दिन सुबह उठने पर मेंडेलीफ ने उस तालिका को लिख लिया। यह १८६९ के शुरू के महीनों की बात है।

कैसी थी यह तालिका?

सभी रसायनिक तत्व एक प्राकृतिक क्रम में बैठ जाते हैं! आरम्भ होता है हाइड्रोजन से। यह सबसे हलका तत्व है और इसके परमाणु सबसे छोटे हैं। सबसे भारी तत्व है यूरेनियम, जिसका परमाणु-भार है २३८। इन दो सिरों के बीच सभी तत्व—बढ़ते हुए परमाणु-भार के क्रम में—अपना-अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं। परमाणु-भार के अनुसार यदि तत्वों की एक तालिका बनायी जाय, तो ये सारे तत्व कुछ वर्गों या परिवारों में बट जाते हैं और प्रत्येक वर्ग के गुण-धर्म एक जैसे प्रकट होते हैं।

कल्पना करो एक भीड़ की। इस भीड़ के लोग कम-ज्यादा ऊंचाई के हैं और इनकी पोशाक भिन्न-भिन्न रंगों की है। पहली नजर में यह भीड़ एक मेले जैसी लगती है। किन्तु अब कल्पना करो कि इस भीड़ के व्यक्तियों को ऊंचाई के अनुसार कुछ कतारों में खड़ा कर दिया गया है। तब जादू की तरह एक नयी चीज सामने आती है। ऊंचाई के अनुसार पंक्तियां

बनाने पर एक कॉलम में एक ही रंग की पोशाक पहने लोग नजर आते हैं।

मेले की भीड़ को इस प्रकार यदि कतारों में खड़ा किया जाय, तो शायद ही रंगों की यह एकसूत्रता नजर आये। किन्तु मेंडेलीफ ने जब तत्वों को सात कॉलमों की कतारों में खड़ा किया तो उन्हें इनमें एक-सूत्रता नजर आयी, एक नियमबद्धता दिखायी दी।

इस प्रकार, शुरू में वस्तु-जगत में जो अनेकरूपता जान पड़ती थी, उसके मूल में यह अद्‌भुत एकसूत्रता प्रकट हुई। तत्वों को कतारों में रखने से एक ही कॉलम के सारे तत्व एक जैसे गुण-धर्म दर्शाते हैं! हर पंक्ति में तत्व पुनः उन्हीं गुण-धर्मों को दोहराते हैं जो कि पहले की पंक्ति के तत्वों के होते हैं। तत्वों के गुण-धर्मों को यह पुनरावृत्ति एक महान खोज थी।

मेंडेलीफ ने इस तालिका को "आवर्त्त-तालिका" या "आवर्त्त-नियम" का नाम दिया।

खोज पूरी हो चुकने के बाद कोई भी महान आवि-ष्कार सरल मालूम होता है। सभी सोचते हैं कि यह आविष्कार किसी ने पहले ही क्यों नहीं किया! कुछ दूसरे वैज्ञानिकों ने भी परमाणु-भार को आधार बनाकर इस प्रकार की तालिका बनाने के प्रयत्न किये थे, किन्तु

उन्हें पूर्ण सफलता नहीं मिली थी। अन्त में मेंडेलीफ ने यह महान खोज की।

प्रकृति का कोई भी व्यापक नियम, न केवल पहले की जानकारी को एकसूत्रता में बांधता है, बल्कि नये तथ्य खोजने में भी सहायक बनता है।

मेंडेलीफ द्वारा खोजा गया यह आवर्त्त-नियम ऐसा ही एक व्यापक एवं शक्तिशाली नियम था। एक बार यह नियम खोजा गया, तो फिर गलत तथ्यों को तो दुरुस्त किया ही जा सकता है, इससे नये तथ्य खोजने में भी मदद मिलती है।

तुम जानते हो कि तत्वों के परमाणु-भार को आधार बनाकर मेंडेलीफ ने इस आवर्त्त-तालिका को खोजा था। तो क्या उस समय के वैज्ञानिकों को सारे तत्वों के परमाणु-भार सही-सही मालूम थे?

नहीं। लेकिन अब मेंडेलीफ के सामने आवर्त्त-नियम था। इस नियम की सत्यता में उनका अटूट विश्वास था। इसी के आधार पर उन्होंने कुछ तत्वों के परमाणु-भारों को गलत सिद्ध किया। उन्होंने कहा कि टैलुरियम तत्व का परमाणु-भार १२८ नहीं, बल्कि १२३ और १२६ के बीच होना चाहिए।

तत्वों के बारे में नयी जानकारी देने के लिए अब मेंडेलीफ को प्रयोगशाला में जाने की जरूरत नहीं थी।

वह अपनी इस आवर्त्त-तालिका को देखकर ही तत्वों के गुण-धर्मों के बारे में नयी-नयी जानकारी देने में समर्थ थे। इतना ही नहीं, अब वह नये तत्व—ऐसे तत्व जो तब तक खोजे नहीं गये थे—के बारे में भी भविष्य-वाणी करने में समर्थ थे।

नये तत्व !

तुम कहोगे : बिना प्रयोगशाला में खोजे नये तत्वों का पता कैसे चल सकता है ?

चल सकता है। और, यही इस आवर्त्त-तालिका की सबसे बड़ी विशेषता थी। मेंडेलीफ ने केवल अपनी आवर्त्त-तालिका का अध्ययन करके ही कई नये तत्वों के होने की भविष्यवाणी की।

आओ, हम तुम्हें इसके बारे में बताते हैं...

सन १८६९। आज से लगभग सौ साल पहले मेंडेलीफ ने अपनी आवर्त्त-तालिका खोजी थी। उस समय तक वैज्ञानिकों को कुल मिलाकर ६३ मूलतत्व ज्ञात थे। सबसे भारी तत्व यूरेनियम का परमाणु-भार ९२ था। अतः मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका में तत्वों के कई घर खाली थे।

खाली घरों वाले ये तत्व कौन-से थे ? कोई भी इन तत्वों के बारे में नहीं जानता था। किसी ने भी इन तत्वों के दर्शन नहीं किये थे !

भविष्यवाणियों के दिन लद चुके थे। यूरोप के वैज्ञानिक अब भविष्यवाणियों में यकीन नहीं करते थे। फिर भी, मेंडेलीफ ने भविष्यवाणी की। उन्होंने कहा :

"एक ऐसा तत्व है जिसे अब तक नहीं खोजा गया है। मैंने उसे 'एक-एल्यूमिनियम' का नाम दिया है। मैंने उस अज्ञात तत्व को यह नाम इसलिए दिया है क्योंकि उसके गुण-धर्म एल्यूमिनियम धातु जैसे होंगे। यदि इसे खोजो, तो यह तुम्हें मिल जायेगा।"

धर्म के किसी पैगम्बर की तरह मेंडेलीफ ने यह भविष्यवाणी की थी। लेकिन पैगम्बर की भविष्यवाणी में और विज्ञान की भविष्यवाणी में बहुत बड़ा अन्तर होता है। मेंडेलीफ ने आवर्त-तालिका के रूप में प्रकृति के एक व्यापक एवं शक्तिशाली नियम की खोज कर डाली थी। नियम की खोज होने पर भी इसमें कुछ घर खाली थे। व्यापक नियम के आधार पर इन खाली घरों वाले अज्ञात तत्वों के बारे में भविष्यवाणी की जा सकती थी। इसीलिए मेंडेलीफ ने कहा कि अमुक खाली घर में अमुक गुण-धर्मों वाला तत्व होना चाहिए। इतना ही नहीं, उन्होंने उस अज्ञात तत्व का परमाणु-भार भी बताया। और, तब कहा—खोजो 'एक-एल्यूमिनियम' को !

पर यह 'एक-एल्यूमिनियम' क्या है ? एल्यूमिनि-

यम के पहले यह 'एक' शब्द क्यों ? 'एक' तो भारतीय शब्द है ?—तुम शायद पूछोगे।

सचमुच ही यह भारतीय शब्द है। यह संस्कृत का शब्द है। आज भी हम १ के अर्थ में इस शब्द का इस्तेमाल करते हैं। मेंडेलीफ के एक-एल्यूमिनियम का अर्थ था एल्यूमिनियम + १ !

मेंडेलीफ ने केवल 'एक-एल्यूमिनियम' की ही भविष्यवाणी नहीं की थी। उन्होंने इसी प्रकार 'एक-बोरोन' और एक अन्य तत्व की भी भविष्यवाणी की थी। मेंडेलीफ ने इन तत्वों को देखा नहीं था। उन्होंने केवल अपनी आवर्त्त-तालिका का अध्ययन करके ही प्रकृति में इन तत्वों के होने की बात कही थी। उन्होंने इन अज्ञात तत्वों के परमाणु-भार बताये और यह भी बताया कि ये तत्व कौन-से यौगिक बनाते हैं।

यह कैसा जादू है ? जिन तत्वों को किसी ने देखा नहीं, स्वयं मेंडेलीफ ने भी नहीं देखा, वह उनके गुण-धर्म बता रहे हैं !

उस समय के बहुत से वैज्ञानिकों ने मेंडेलीफ की इन भविष्यवाणियों का मजाक उड़ाया। वे कहते—"यह रसायन-शास्त्र नहीं है, यह तो जादू है ! यह तो सपनों के आधार पर भविष्य बताने जैसा हुआ !"

साल गुजरते गये। मेंडेलीफ की भविष्यवाणियों को वैज्ञानिक भूल गये !

[१२]

छः साल बाद।...

२० सितम्बर १८७५ का दिन आया। इस दिन पेरिस की फ्रेंच विज्ञान-अकादमी की एक बैठक में एक अज्ञात विद्यार्थी का पत्र पढ़ा गया—"परसों रात २७ अगस्त १८७५ को, सुबह तीन और चार बजे के बीच, मैंने एक नये तत्व की खोज की है। यह तत्व मैंने पाइरेनीज की खान के जिंक-सल्फाइड में खोजा है..."

नया तत्व ! बहुत वर्षों बाद वैज्ञानिकों ने नये तत्व की खोज का समाचार सुना था। जिस तरुण फ्रेंच वैज्ञानिक ने यह नया तत्व खोजा था उसका नाम था लेको द बोइंबॉद्र। इस तरुण वैज्ञानिक ने अपने पत्र में यह भी सूचित किया था कि इस तत्व के गुण-धर्मों के बारे में उसकी खोज जारी है। अभी वह इतना ही बता सकता है कि यह नया तत्व कई बातों में एल्यूमिनियम तत्व जैसा है...

उस तरुण वैज्ञानिक ने इस नये तत्व को

"गालियम" नाम दिया, अपने देश के नाम पर। फ्रांस का पुराना लेटिन नाम गालिया था।

इस नये तत्व की खोज का मेंडेलीफ को सेंट-पीटरबर्ग में जब समाचार मिला, तो वह भी चकित रह गये। पाइरेनीज की एक खान में इस तरुण वैज्ञानिक ने जो यह तत्व खोजा था, वह असल में नया नहीं था। छः साल पहले मेंडेलीफ ने इस तत्व के बारे में भविष्य-वाणी की थी! यह वही 'एक-एल्यूमिनियम' था!

पुराने जमाने में ऐसी घटना को लोग जादू का नाम देते। अपनी भविष्यवाणी को सही उतरी हुई देखकर मेंडेलीफ को अपार आनन्द हुआ। उन्होंने पेरिस की उस विज्ञान-अकादमी को पत्र लिखा— "गालियम वही 'एक-एल्यूमिनियम' है जिसकी मैंने भविष्यवाणी की थी। इसका परमाणु-भार है लगभग ६८, और इसका विशिष्ट-गुरुत्व है लगभग ५.९। परीक्षण कीजिए और देखिए कि यह सही है या नहीं।"

अजीब स्थिति थी! सेंट पीटरबर्ग में एक वैज्ञा-निक अपने अध्ययन-कक्ष में बैठकर भविष्यवाणियां कर रहा था और दूसरा वैज्ञानिक पेरिस की प्रयोगशाला में प्रयोग करके उन भविष्यवाणियों को सिद्ध कर रहा था।

लेकिन यह क्या? पेरिस में नये तत्व गालियम

पर प्रयोग करते समय इसका विशिष्ट गुरुत्व ४.७ निकला, न कि ५.९, जैसा कि मेंडेलीफ ने कहा था।

तो क्या मेंडेलीफ की भविष्यवाणी गलत थी? मेंडेलीफ को जब इसका पता चला तो उन्होंने सेंट-पीटरबर्ग से लिखा—"वह आंकड़ा गलत है। गालियम का विशिष्ट-गुरुत्व ५.९ ही होना चाहिए। आप गालियम के शुद्ध टुकड़े को लेकर पुनः परीक्षण कीजिए।"

और सचमुच ही शुद्ध गालियम लेकर पुनः परीक्षण किया गया। मेंडेलीफ की ही बात सही निकली। गालियम का विशिष्ट-गुरुत्व ५.९ ही था।

मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका की यह एक महान विजय थी। कुछ दिनों बाद स्कैंडिनेविया के दो वैज्ञा-निक निल्सोन और क्लेवे ने मेंडेलीफ के 'एक-बोरोन' तत्व की खोज की और इसे 'स्कैंडियम' नाम दिया।

मेंडेलीफ ने १८७० में एक और अज्ञात तत्व 'एक-सिलिकोन' की भविष्यवाणी की थी। पंद्रह साल बाद जर्मन रसायनज्ञ विंकलेर ने चांदी के एक खनिज में इस तत्व की खोज की और इसे 'जर्मेनियम' नाम दिया। इस तत्व के गुण-धर्मों के बारे में भी मेंडेलीफ की भविष्यवाणियां लगभग सही निकलीं।

अब तो मेंडेलीफ के आवर्त्त-नियम के बारे में किसी

को भी संदेह नहीं रह गया। मेंडेलीफ की तालिका से अब सारे तत्वों का चित्र साफ-साफ नजर आने लगा। आवर्त्त-तालिका के खाली घरोंवाले तत्वों को खोजना अब आसान हो गया। अब नये तत्व खोजने की कुंजी हाथ लग गयी थी।

फिर भी, नये तत्वों के बारे में कुछ अद्‌भुत बातें छिपी हुई थीं—इतनी अद्‌भुत कि उन्होंने मेंडेलीफ को भी चकित कर दिया। नये तत्वों का ऐसा वर्ग खोजा गया जिसके बारे में खुद मेंडेलीफ भी अंदाजा नहीं लगा सके थे। लेकिन इन नये तत्वों की खोज ने मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका को गलत साबित नहीं किया। उल्टे, इन तत्वों ने मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका की और अधिक पुष्टि की।

लेकिन यह आगे की बात है। इस अद्‌भुत खोज के बारे संक्षेप में हम आगे बतायेंगे। अभी तो हमें यह देखना है कि अपनी महान खोज के बाद मेंडेलीफ ने आगे क्या-कुछ किया . . .

[१३]

तुम्हें याद होगा कि जर्मनी में दो साल तक रहने के बाद मेंडेलीफ १८६१ में सेंट-पीटरबर्ग लौट आये थे। तब मेंडेलीफ की उम्र केवल २८ साल थी।

अगले साल उन्होंने फेओज्वा निकितिच्ना लेश्चेवा से विवाह किया। फेओज्वा दुबली-पतली, चिड़चिड़े दिमाग की औरत थी। मेंडेलीफ के खोज-कार्य में उसकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। ऐसी हालत में दोनों की कैसे पट सकती थी? विवाह होने पर भी बेचारे मेंडेलीफ अकेले रह गये।

एक लम्बे अर्से तक उनका जीवन ऐसे ही चलता रहा। उन्होंने अपनी सारी शक्ति अपने खोज-कार्य में लगा दी। अन्त में १८७८ में एक लड़की पर उनकी नजर पड़ी। यह लड़की थी अन्ना इवानोव्ना पोपोवा।

अन्ना वैज्ञानिक के जीवन को समझती थी। स्वभाव भी उसका कोमल था। अन्त में १८८० में मेंडेलीफ और अन्ना का विवाह हो गया। इस दूसरे विवाह के बाद मेंडेलीफ का पारिवारिक जीवन सुख और शान्ति

में बीतने लगा। बाद में मेंडेलीफ के अन्ना से दो पुत्र और दो पुत्रियां हुईं।

हम तुम्हें बता चुके हैं कि मेंडेलीफ ने 'रसायन-शास्त्र के मूलाधार' ग्रंथ को लिखने की शुरूआत की थी। इसी ग्रंथ को तैयार करते समय १८६९ में उन्होंने आवर्त्त-तालिका की खोज की थी। आवर्त्त-तालिका के आधार पर ही उन्होंने अपने इस महान ग्रन्थ की रचना की। उनका यह ग्रन्थ १८७१ से पहले प्रकाशित हुआ। जिस ग्रन्थ को तैयार करते हुए उन्होंने आवर्त्त-तालिका की खोज की थी, उस ग्रन्थ के प्रति उनका विशेष प्रेम होना स्वाभाविक बात थी।

इसीलिए उन्होंने लिखा था कि, " 'मूलाधार' मेरा प्रिय पुत्र है। 'मूलाधार' माने मैं। अध्यापक के रूप में मेरे सारे अनुभव और विज्ञान के बारे में गहरे विचार इस ग्रन्थ में समाहित हैं।"

बाद में इस ग्रन्थ के कई संस्करण प्रकाशित हुए। मेंडेलीफ नयी-नयी जानकारी के अनुसार इस ग्रन्थ में संशोधन करते गये।

मेंडेलीफ की खास रुचि यद्यपि रसायन-शास्त्र में थी, किन्तु उन्होंने अपने को केवल एक विषय और प्रयोगशाला से ही बांधकर नहीं रखा था। आवर्त्त-तालिका की खोज के बाद उन्होंने गैसों के बारे में कई

नयी बातें खोजीं। इन्हों गैसों का अध्ययन करते समय उन्होंने एक बार गुब्बारे में आसमान की सैर भी की।

हां, सचमुच ही मेंडेलीफ ने आसमान की सैर की। आज तो तुम अंतरिक्ष-यात्रा के समाचार प्रायः रोज ही सुनते हो, लेकिन उस समय तो हवाई-जहाज भी नहीं बने थे। हां, बड़े-बड़े गुब्बारे बनते थे, गोंडोला बनते थे। इनमें हलकी हवा भरकर इन्हें आसमान में भेजा जाता था।

मेंडेलीफ ने रूस के भौतिक रसायन संस्थान को एक नये प्रकार के गोंडोला की योजना बनाकर दी। यह एक ऐसा गोंडोला था जिसमें केवल वैज्ञानिक उपकरण रखने की व्यवस्था थी। तब किसी आदमी को ऊपर भेजने की जरूरत नहीं रह जाती थी। फिर भी, कुछ मित्रों ने मेंडेलीफ से उस गोंडोला में बैठने और ऊपर जाने का आग्रह किया। मेंडेलीफ आग्रह को नहीं टाल सके। ७ अगस्त १८८७ को सूर्य-ग्रहण था। इस ग्रहण का परीक्षण करने के लिए गोंडोला ऊपर भेजा जा रहा था। मेंडेलीफ ने उस गोंडोला में बैठकर आसमान की सैर की।

पहले से ही रूस के तेल-उद्योग में मेंडेलीफ की गहरी रुचि थी। उन्होंने काले सागर के पास बाकू के प्रसिद्ध तेल-कुओं को पहले एक बार देखा था। उस

समय तेल के उत्पादन का उद्योग बहुत बुरी हालत में था। जार सरकार नें खूब अधिक कर लगाये थे। मेंडेलीफ ने सुझाव दिया कि कर हटा दिये जायें, तो इस उद्योग की हालत सुधर जायेगी। उन्होंने तेल-उद्योग का अध्ययन करने के लिए १८७६ में अमरीका की यात्रा की। वहां उन्होंनें देखा कि पूंजीपति इस उद्योग से मनमाना मुनाफा कमा रहे हैं, किन्तु इस उद्योग के वैज्ञानिक पक्ष पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा। अमरीका के तेल-उद्योग के बारे में उन्होंने लिखा : "यह उद्योग केवल मुनाफा कमाने के ख्याल से चालू रखा जा रहा है।"

बाकू के तेल-उद्योग के बारे में मेंडेलीफ ने कई नये सुझाव दिये। उन्होंनें तेल की सफाई करने के कुछ नये तरीके भी खोज निकाले। परन्तु उस समय सत्ता के मद में चूर जार सरकार ने उनके सुझावों से कोई विशेष लाभ नहीं उठाया।

मेंडेलीफ ने रूस के कोयला और लोहा उद्योगों के बारे में भी कई सुझाव दिये। ढलती उम्र में १८९९ में उन्होंने उराल की लोहा खानों की लंबी यात्रा की थी।

[१४]

पिछले अध्याय में हमनें देखा कि मेंडेलीफ नें विज्ञान के साथ उद्योग और मेहनत का सम्बन्ध स्थापित करनें के लिए अथक प्रयत्न किये। शासन की कटु आलोचना करनें में भी वह कभी पीछे नहीं रहे। अपनी सही बात पर डटे रहना उनका सिद्धान्त था। ऐसी ही एक बात पर उन्होंने सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय के अपने अध्यापक पद से त्यागपत्र दे दिया था।

हां, सचमुच ही त्यागपत्र दे दिया था।

जानते हो क्यों ?

इसलिए कि जार सरकार के शिक्षा-विभाग नें विद्यार्थियों की कुछ मांगों को ठुकरा दिया था। इसी बात पर विद्यार्थियों के प्रिय प्राध्यापक मेंडेलीफ नें अपनें पद से इस्तीफा दे दिया...

जनता के प्रति अपनी सच्ची वफादारी के लिए मेंडेलीफ को भारी कीमत चुकानी पड़ी। मेंडेलीफ की ख्याति चारों ओर फैल चुकी थी। उनकी गणना अब

संसार के महान वैज्ञानिकों में होती थी। इसलिए जार की सरकार उनको कोई दंड नहीं दे सकती थी। लेकिन अन्य उपायों से उन्हें अपमानित करना सरकार के बायें हाथ का खेल था।

उस समय रूस में एक विज्ञान-अकादमी थी। कहने के लिए यह "रूसी साम्राज्य की सबसे बड़ी वैज्ञानिक संस्था" थी। लेकिन व्यवहार में इस संस्था का हाल कुछ दूसरा ही था।

रूस के एक प्रख्यात वैज्ञानिक झिनिन की मत्यु हो गयी थी। वह इस विज्ञान-अकादमी के एक सदस्य थे। उनकी मत्यु से अकादमी में रसायन-प्रविधिज्ञ का पद खाली हो गया। उस खाली स्थान के लिए बटलेरोव आदि प्रमुख वैज्ञानिकों ने मैंडेलीफ का नाम सुझाया। सभी जानते थे कि इस खाली स्थान के लिए मेंडेलीफ से बेहतर कोई भी अन्य वैज्ञानिक नहीं मिल सकता।

लेकिन इस पद के लिए चुनाव हुआ, तो उसमें मेंडेलीफ की हार हुई। मेंडेलीफ सरकार की आलोचना करते थे, इसलिए सरकार के पिट्ठू सदस्यों ने मेंडेलीफ के खिलाफ अपने वोट दिये।

मैंडेलीफ का चुनाव न करने से सारे रूस में इस विज्ञान-अकादमी की कटु आलोचना हुई। उन दिनों के

रूसी समाचार-पत्रों में इस "मेंडेलीफ प्रकरण" के बारे खूब लेख प्रकाशित हुए। बटलेरोव ने भी एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था—"राजकीय विज्ञान-अकादमी—राजा की या रूस की ?"

रूस के जार अलेक्जेंडर द्वितीय की मार्च १८८१ में हत्या कर दी गयी। इसके बाद रूसी शासन में कई प्रकार के परिवर्तन हुए। शासन और भी अधिक कठोर हो गया। शासकों का विचार था कि विज्ञान की उन्नति के कारण रूस के तरुणों में तर्कवादिता बढ़ती जा रही है, इसलिए शासन वैज्ञानिकों पर विशेष निगरानी रखने लगा था।

साल बीतते गये। अन्त में शासन के शिक्षा-विभाग की कठोरताएं इतनी अधिक बढ़ गयीं कि उन्हें विद्यार्थी सह नहीं सकते थे। १८९० में उस समय के एक शिक्षा-मन्त्री काउन्ट देल्यानोव मैंडेलीफ से बेहद नाराज थे। इसी समय सेंट पीटरबर्ग के विद्यार्थियों का विरोध तीव्र हो उठा।

विद्यार्थियों ने अपनी एक सभा की। सरकार के सामने अपनी मांगें रखने के लिए उन्होंने एक याचिका तैयार की। फिर उन्होंने और एक सभा बुलाकर उसमें प्राध्यापकों को भी आमन्त्रित किया। मैंडेलीफ ने भी इस सभा में भाग लिया। इस याचिका को शिक्षा-

मन्त्रालय को भेजने के बारे में इस सभा में निर्णय लिया गया।

लेकिन कौन इस याचिका को सरकार के सामने पेश करेगा ? बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा ?

विद्यार्थियों ने मैंडेलीफ से इस याचिका को सरकार के सामने पेश करने की प्रार्थना की। क्या मेंडेलीफ इसके लिए तैयार हो गये ? हां, १६ मार्च १८९० को मेंडेलीफ ने खुद यह याचिका शिक्षा-मंत्री देल्यारोव के सामने पेश की। किन्तु देल्यारोव ने इस याचिका को लेने से इनकार कर दिया। उन्होंने याचिका मेंडेलीफ को लौटा दी !

मैंडेलीफ को यह अपमान असह्य लगा। इस बात पर ही उन्होंने सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय से त्याग-पत्र दे दिया।

पिछले ३३ सालों से मैंडेलीफ इस विश्वविद्यालय में प्रध्यापक थे। त्यागपत्र देने के बाद २२ मार्च १८९० को वह अपना अंतिम लेक्चर देने क्लास में आये। इस लेक्चर की अंतिम पंक्तियां थीं—"मेरा आपसे एक निवेदन है। कई कारण हैं जिस से मैं चाहूंगा कि आप उस समय तालियां न बजायें जब मैं यहां से जाऊं !"

मैंडेलीफ के इन शब्दों से उपस्थित समुदाय इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उनके वहां से जाते समय

हॉल में एक शब्द भी सुनायी नहीं पड़ा, किसी ने ताली नहीं बजायी ! हॉल में पूरी शांति रही !

विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण करने पर भी मैंडेलीफ चुपचाप नहीं बैठे। सरकार उनका अपमान भले ही करे, लेकिन उनकी उपेक्षा नहीं कर सकती थी। मौका पड़े तो सरकार को उनके पास दौड़कर जाना पड़ता था। रूस और जापान के बीच युद्ध छिड़ गया, तो सरकार को पुनः मैंडेलीफ की जरूरत पड़ी। सरकार ने उनसे धुंआ-रहित बारूद बनाने को कहा।

मेंडेलीफ ने १८९०-९१ के बीच एक नये प्रकार की बारूद ईजाद की। उन्होंने इस बारूद को "पाइ-रोकोलोडिओन" का नाम दिया।

सरकार ने इसके बाद मेंडेलीफ से और भी कई सेवाएं लीं। १८९२ में उन्हें नये प्रकार के बांट और तौल बनाने का काम सौंपा। मेंडेलीफ ने कई प्रकार के नये सुझाव दिये। उन्होंने १८९९ में रूस में मीट्रिक-प्रणाली चालू कर दी।

तुम जानते ही हो कि मीट्रिक-प्रणाली में बहुत-सी सुविधाएं हैं। हमारे देश में अब माप-तौल आदि की मीट्रिक-प्रणाली ही चलती है।

इस प्रकार, मेंडेलीफ ने अपने जीवन के अंतिम दिनों तक नये-नये सुझाव देकर अपने देश की सेवा

को। दूसरी तरफ, उनकी आवर्त्त-तालिका के आधार पर

वृद्ध मेंडेलीफ

नये-नये तत्व खोजे जा रहे थे। आवर्त-तालिका का उनका आविष्कार रसायन-शास्त्र को तेजी से आगे बढ़ा रहा था।

[१५]

हमने वर्णक्रमदर्शी यंत्र के बारे में कुछ बातें तुम्हें पहले बतायी हैं। तुम्हें याद होगा कि बुन्सेन और किरचोफ ने इस यंत्र की सहायता से कई नये तत्व खोजे थे। इस यंत्र की सहायता से सूर्य में पाये जाने वाले तत्वों को भी पहचाना गया था।

लेकिन सूर्य के वर्णक्रम-पट में एक रेखा ऐसी थी जिसका तत्व यहां धरती पर उस समय तक किसी वैज्ञानिक ने नहीं खोजा था। इसलिए बहुत साल तक यह खोज यूं ही पड़ी रह गयी।

अन्त में १८९४ में इंग्लैंड के दो प्रसिद्ध वैज्ञानिक रैले और रामजे ने वायु में दो नये तत्व खोजे। ये दो तत्व थे—हीलियम और आर्गोन। हीलियम वही तत्व था जो सबसे पहले सूर्य के वर्णपट में देखा गया था।

लेकिन इन दो नये तत्वों का मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका में कहां स्थान है? मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका में इन नये तत्वों के लिए कोई स्थान खाली नहीं था!

तो क्या आवर्त्त-तालिका गलत थी ?

या, ये नये तत्व मूलतत्व नहीं थे ?

खोज जारी रही। कुछ दिनों बाद रामजे ने हीलियम और आर्गोन की तरह के और तत्व खोजे— निओन, क्रिप्टोन और जेनोन। ये सारे तत्व समान गुण-धर्मों वाले थे। ये गैसें बहुत ही अल्प मात्रा में वायु में पायी जाती हैं। इन गैसों की विशेषता यह है कि ये किसी भी अन्य तत्व के साथ मिलकर यौगिक नहीं बनातीं। इसीलिए इनको "अक्रिय गैस" कहा जाता है।

इन सारी अक्रिय गैसों के लिए मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका में कोई स्थान खाली नहीं था।

तब ?

असल में सारी अक्रिय गैसें एक ही परिवार की सदस्य हैं। और, यही कारण है कि आवर्त्त-तालिका में शुरू में इनके लिए कोई स्थान नहीं था। लेकिन इन्हें एक ग्रुप या परिवार मानने पर तालिका में इनके लिए एक कॉलम में स्थान आसानी से बन जाता है।

इस प्रकार, इन नयी गैसों की खोज से आवर्त्त-तालिका को और भी अधिक बल मिला। इसके बाद आवर्त्त-तालिका की सचाई के बारे में किसी को कोई संदेह नहीं रह गया।

मेंडेलीफ की आवर्त्त-तालिका भौतिक जगत का एक व्यापक और शक्तिशाली नियम है।

[१६]

साल गुजरते गये। मेंडेलीफ अब बूढ़े हो चले थे। फिर भी वह काम करते रहे। आंखों की ज्योति मंद पड़ जाने पर भी वह काम करते रहे।

जीवन के अंतिम दिनों में उन्होंने "मेरे विचार" नाम से एक ग्रंथ भी लिखा।

जनवरी १९०७ के शुरू के एक दिन की बात है। मेंडेलीफ बांट-तौल संस्थान का तब भी काम देख रहे थे। उस दिन उद्योग व व्यापार के मंत्री फिलोसोफोव संस्थान को देखने आये थे। मेंडेलीफ ने स्वयं मंत्री को संस्थान के सारे कामों का परिचय कराया। बाद में वह मंत्री को उनकी गाड़ी तक पहुंचाने नीचे उतरे। बाहर ठंडी हवा चल रही थी। ७३ साल के वयोवृद्ध मेंडेलीफ जाड़ा खा गये। उन्हें निमोनिया हो गया !

मेंडेलीफ की एक रिस्तेदार—कापुस्तिना-बुबकिना ने उनकी अंतिम घड़ी के बारे में कुछ जानकारी दी है। बताया जाता है कि अंतिम समय तक मेंडेलीफ के

हाथ में कलम थी। मृत्यु के समय भी उनके हाथ में कलम थी...

संसार के इस महान वैज्ञानिक की २० जनवरी १९०७ को मृत्यु हुई। मृत्यु के समय मेंडेलीफ की आयु ७३ साल की थी।

मेंडेलीफ के जीवन-काल तक ८६ तत्व खोजे जा चुके थे। आज यदि तुम आवर्त्त-तालिका को देखो तो उसमें तुम्हें १०४ तत्व दिखायी देंगे। आज की आवर्त्त-तालिका में तुम यह भी देखोगे कि १०१ नम्बर के तत्व का नाम "मेंडेलियेवियम" है !!

मेंडेलीफ की महान खोज 'आवर्त्त-तालिका' में स्वयं उनके अमर नामवाला एक तत्व !

[१७]

तुमने मैंडेलीफ की जीवनी पढ़ी। तुमने उनकी महान खोजों के बारे में भी पढ़ा। तुमने यह भी जाना कि कष्ट चाहे कितने भी हों, उन्होंने हमेशा अपने देश की जनता का पक्ष लिया।

आज मैंडेलीफ के देश में मजदूरों-किसानों का राज्य है। लेकिन मेंडेलीफ के समय में वहां जार का शासन था। जनता अपार कष्ट भोग रही थी। मैंडे-लीफ वैज्ञानिक थे, पर ऐसे वैज्ञानिक नहीं जो अपनी प्रयोगशाला और अपने खोज-कार्य में ही खोये रहते हों। जनता यदि सुखी न हो, स्वतन्त्र न हो, तो वैज्ञानिक खोजों का क्या लाभ ? मैंडेलीफ अपने देश की जनता को जार के जुए से मुक्त देखना चाहते थे। वह भली-भांति जानते थे कि देश में जनता का राज्य होगा, देश के हर नागरिक को बराबरी के अधिकार प्राप्त होंगे, देश में साम्यवाद आयेगा, तभी देश की जनता अमन और चैन से रह सकेगी। इसीलिए उन्होंने कहा था—"यदि हमारे देश में विदेश के अच्छे विचार आते हैं,

साम्यवाद आता है, तो मुझे उसका भय नहीं है। मुझे अपने देश की जनता में पक्का विश्वास है। मेरे देश की जनता ने तातारों (मंगोलों) के जुए को उतार फेंका था, मेरे देश की जनता ने सामन्ती शासन को भी खत्म कर दिया है।"

मैंडेलीफ के बचपन में रूस में अभी रेल नहीं आयी थी, पर बाद में उनकी ढलती उम्र में रूस में रेल शुरू हो गयी थी। मेंडेलीफ हमेशा तीसरे दर्जे में यात्रा करते थे!

क्यों तीसरे दर्जे में यात्रा करते थे, जानते हो?

इसलिए कि तीसरे दर्जे में यात्रा करने वाली गरीब किसान जनता के साथ वह घुल-मिल कर बात-चीत कर सकें।

तुम पढ़ ही चुके हो कि जनता से प्यार करने और जार के शासन की कटु आलोचना करने का मेंडेलीफ को क्या फल मिला। वह अपने ही देश की विज्ञान-अकादमी के सदस्य नहीं चुने जा सके! विद्यार्थियों का पक्ष लेने के कारण उन्हें सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय से त्यागपत्र देने के लिए मजबूर होना पड़ा।

पर मैंडेलीफ की कीर्ति सारे वैज्ञानिक जगत में फैल चुकी थी।

यूरोप और अमरीका की वैज्ञानिक संस्थाओं ने

उन्हें अपना सम्मानित सदस्य बनाया। प्रिंसटन, कैम्ब्रिज, ऑक्सफोर्ड और गाटिंगेन जैसे प्रसिद्ध विश्व-विद्यालयों ने उन्हें डाक्टर की उपाधियां प्रदान कीं।

एक बार का किस्सा है। इंग्लैंड की रसायन-सोसायटी ने अपना प्रसिद्ध डेवी-पदक मैंडेलीफ को प्रदान करने के लिए एक समारोह आयोजित किया। जानते हो न डेवी कौन थे? इंग्लैंड के वही महान वैज्ञानिक हम्फ्री डेवी जिन्होंने बहुत से नये तत्व खोजे थे।

इस समारोह में डेवी-पदक के साथ मैंडेलीफ को रुपयों की एक थैली भी भेंट की गयी।

मेंडेलीफ ने उन रुपयों का क्या किया?

उन्होंने उसी समारोह में उस थैली के सिक्के मेज पर उड़ेल दिये और भाव भरे शब्दों में बोले—मैं इस स्थान पर ये रुपये स्वीकार नहीं कर सकता। यह स्थान हमें उस महान वैज्ञानिक के अथक परिश्रमों की याद दिलाता है। यहां पैसा स्वीकार करना गुनाह है। मेरे लिए यही बहुत बड़ी बात है कि सोसायटी ने मुझे डेवी-पदक देकर सम्मानित किया।

ऐसी थी मैंडेलीफ की विज्ञान के प्रति भक्ति! वह स्वभाव से ही भावुक थे। रूस के महान लेखक लियो तॉलस्तोय उनके आदर्श थे। तॉलस्तोय की तरह वह भी

ढीले-ढाले कपड़े पहनते थे। इस ढीली-ढाली पोशाक में लम्बी दाढ़ी वाला उनका चेहरा पुराने जमाने के किसी ऋषि-मुनि जैसा लगता था। नाटक देखने के लिए तो उन्हें फुर्सत नहीं मिलती थी; पर चित्रों को देखने का और अच्छा संगीत सुनने का उन्हें बहुत शौक था। उनके अध्ययन-कक्ष में लेवोशिए, न्यूटन, गैलीलियो और फैराडे जैसे महान वैज्ञानिकों के चित्र सजे हुए थे। ये चित्र उनकी दूसरी पत्नी अन्ना पोपोवा ने खुद बनाये थे!

आज यदि तुम किसी स्कूल-कालेज की प्रयोगशाला में जाओ तो वहां न्यूटन, गैलीलियो, फैराडे आदि के चित्रों के साथ तुम्हें मेंडेलीफ का चित्र भी जरूर देखने को मिलेगा। रसायन की प्रयोगशाला में या कक्षा में तो मेंडेलीफ की 'आवर्त्त-तालिका' जरूर ही देखने को मिलेगी।

जिस साल मेंडेलीफ की मृत्यु हुई उसी साल रूस के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक और क्रांतिकारी मोरोजोव ने उनके बारे में लिखा था :

"न्यूटन, केपलर, डारविन तथा मार्क्स के सिद्धान्तों की तरह मेंडेलीफ के अनुसंधान भी मानव-जाति की एक अमूल्य निधि हैं। इन महापुरुषों के सिद्धान्त आगे आनेवाली पीढ़ियों का पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे। यही

वजह है कि न केवल वैज्ञानिक व विद्यार्थी, बल्कि जीवन के विविध व्यवसायों वाले सैकड़ों व्यक्ति मेंडेलीफ की शव-यात्रा में शामिल हुए थे। रूस के महान वैज्ञानिक एवं विद्वान पिजारेव, तुर्गनेव, दोब्रोल्युबोव आदि की कब्रों के साथ मेंडेलीफ की पार्थिव देह को दफनाया गया। उनकी शव-यात्रा के समय उनके विद्यार्थियों का समुदाय एक लम्बे-चौड़े बोर्ड को ऊपर उठाये हुए आगे-आगे चल रहा था। इस बोर्ड पर अंकित थी मेंडेलीफ की महान खोज—**आवर्त्त-तालिका**!"

संक्षिप्त तिथि-पत्रक

जन्म : ७ फरवरी १८३४। साइबेरिया के तोबोल्स्क नगर में।
पिता : इवान मेंडेलीफ।
माता : मारिया कोर्निलोफ।
शिक्षा : १८४९ तक तोबोल्स्क के स्कूल में और बाद में सेंट-पीटरबर्ग के प्रशिक्षण-कालेज में।
१८४७ : पिता की मृत्यु।
१८५० : मां की मृत्यु।
१८५३ : कंठ-रक्तस्राव की बीमारी।
१८५५ : स्नातक बने।
१८५७ : सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय में रसायन-शास्त्र के अध्यापक नियुक्त हुए।
१८५९-६१ : जर्मनी में खोज-कार्य।
१८६२ : पहला विवाह।
१८६५ : रसायन-शास्त्र में डाक्टर की उपाधि मिली।
१८६७ : सेंट पीटरबर्ग विश्वविद्यालय में अकार्बनिक रसायन के प्राध्यापक नियुक्त हुए।
१८६९ : आवर्त्त-तालिका की खोज। "रसायन-शास्त्र के मूलाधार" ग्रंथ लिखा।
१८८० : अन्ना पोपोवा से दूसरा विवाह।
१८९० : विश्वविद्यालय से इस्तीफा।
मृत्यु : २० जनवरी १९०७।